Lakshmi

लक्ष्मी

स्त्रीशिक्षा-सम्बन्धी बढ़िया उपन्यास।

❧

लेखक

पण्डित रामनरेश त्रिपाठी

Ramnrash Tripati

❧

प्रकाशक

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग।

Indian press, Paryag

१९२४

1924

प्रथम संस्करण]

[मूल्य ॥=)

निवेदन

—*—

यह उपन्यास मैंने फ़तहपुर (जयपुर) में सं० १९६८ में लिखा था। इसकी भाषा में मारवाड़ी बोली के मुहावरों का कहीं-कहीं अधिक प्रयोग हुआ है। लक्ष्मी की कथा रोचक और स्त्रियों के लिए बड़ी ही शिक्षाप्रद है। आशा है, इससे पाठकों का मनोरञ्जन होगा।

रामनरेश त्रिपाठी।

———
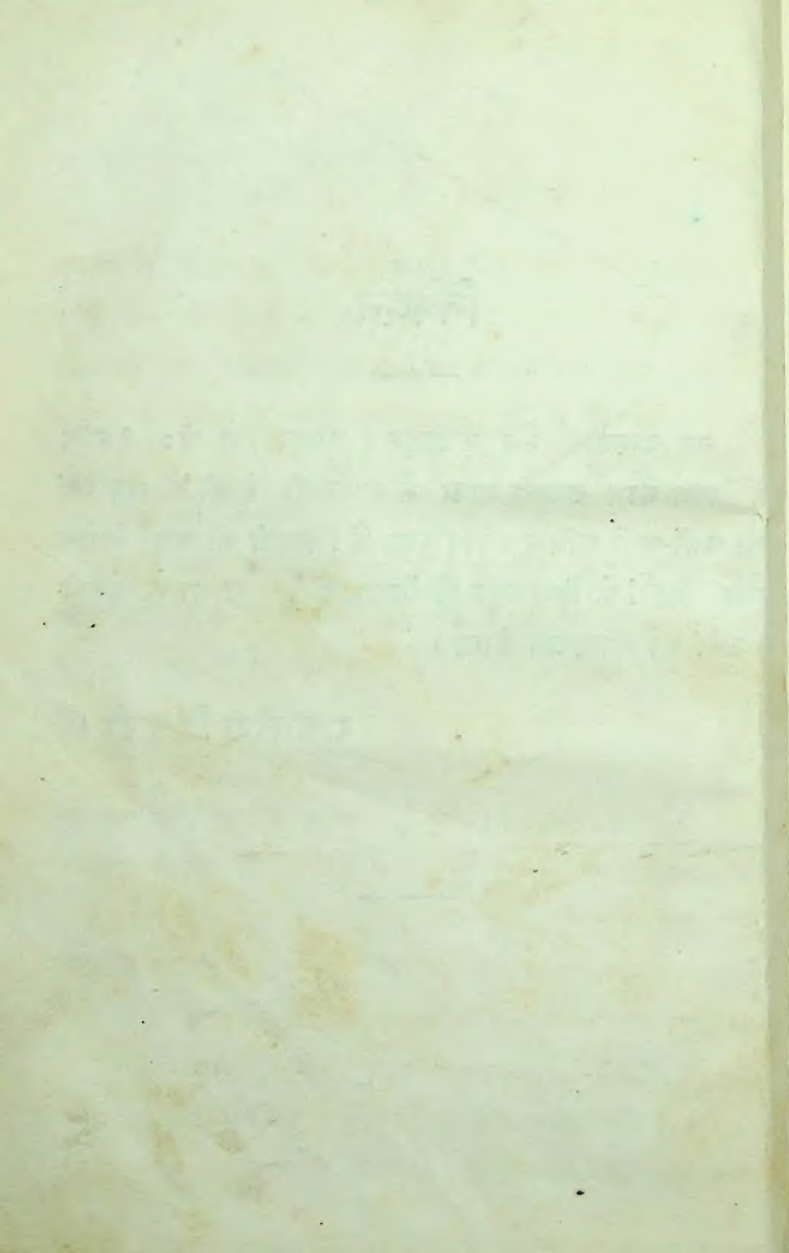
मारवाड़ का परिचय

बहुत लोग ऐसे होंगे जिन्होंने कभी मारवाड़ में भ्रमण नहीं किया होगा। और, बहुत से मारवाड़ी भी ऐसे होंगे जिन्होंने कभी मारवाड़ में पदार्पण नहीं किया। यह आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि बहुत से मारवाड़ी भारतवर्ष के दूसरे प्रान्तों में जाकर बस गये हैं। उनके पुत्रों को मारवाड़ में आने का अवसर नहीं मिला होगा। अतएव उन लोगों के लिए मारवाड़ का परिचय देना एक आवश्यक काम है।

मारवाड़ राजपूताने का एक भाग है। यहाँ की भूमि रेतीली है। चलते समय पैरों को बड़ा आराम मालूम देता है जैसे मख़मल के गद्दे पर चल रहे हों। पर थोड़ी ही दूर चलने में थकावट आ जाती है।

चारों ओर बालू ही बालू है। रेत के बड़े-बड़े टीबे आकाश की ओर पेट फुलाये पड़े हैं। दिन को सूर्य की धूप में चमकते हुए बालू के टीबे सफ़ेद तम्बू के आकार में दिखाई पड़ते हैं। जिस वर्ष बरसात अच्छी होती है, तीन-चार महीने तक टीबों पर मोठ और बाजरे की हरियाली कहीं-कहीं रहती है। शेष महीनों में हरियाली का कहीं नाम तक नहीं रहता।

नदी और झील एक भी नहीं है। कुओं में ८०,९० हाथ नीचे से पानी निकलता है। बरसात के दिनों में पानी बहुत

कम बरसता है। इससे घास और वृक्ष नहीं उग सकते। नीची जगह में कहीं-कहीं बबूल के छोटे-छोटे पेड़ और कहीं कुछ झाड़ियाँ हैं। छाया का बिल्कुल अभाव है। शहरों के आसपास और कुओं के निकट नीम आदि के दो-चार वृक्ष कहीं-कहीं दिखाई पड़ते हैं। अन्नों में मोठ और बाजरा, पशुओं में ऊँट और गधा, और फलों में मतीरा (तरबूज़) यहाँ क. प्रधान वस्तु हैं। बड़े-बड़े धनी भी मोठ की दाल और बाजरे की रोटी बड़े चाव से खाते हैं। ऊँट इस देश के उपयुक्त जानवर हैं। एक स्थान से दूसरे स्थान में आने-जाने के लिए ऊँट की सवारी अच्छी समझी जाती है। घोड़ा-गाड़ी रेत में चल नहीं सकती। ऊँट सचमुच मरु-समुद्र का जहाज़ है। एक बात सुनकर सबको बड़ा आश्चर्य और कौतूहल होगा कि यहाँ स्त्रियाँ भी ऊँट पर चढ़ती हैं। साधारण आदमियों की बारात में ऊँटों का झुण्ड और उन पर चढ़नेवालों का लचक-लचक कर चलना बड़ा ही कौतूहल-वर्द्धक जान पड़ता है।

अपने-अपने समय में गरमी और सरदी दोनों अधिक पड़ती हैं। गरमी के दिनों में दोपहर को घर से बाहर निकलना कठिन हो जाता है। बड़ी तेज़ लू चलती है। देह झुलस जाने का भय रहता है। दिन में हवा के साथ रेत उड़कर आकाश में छा जाती है और रात में बरसती है। जो लोग गर्मी से व्याकुल हो कर रात को खुले स्थान में सोते हैं उनकी नाक में साँस के साथ बहुत सी रेत जम जाती है।

इतना होने पर भी मारवाड़ स्वर्ग है, क्योंकि लक्ष्मी का निवास यहीं है। यहाँ बड़े-बड़े लखपती सेठ हैं। उनके पास अतुल सम्पत्ति है। यहाँ के प्रायः सभी वैश्य व्यापारी हैं। यद्यपि ये लोग बहुत पढ़े-लिखे नहीं होते परन्तु व्यापार में इनकी बुद्धि बड़ी तीव्र होती है। यही देख लो न कि इनके देश में कुछ नहीं पैदा होता, ये लोग अन्य प्रान्तों में जाकर धनी बन जाते हैं परन्तु उन प्रान्तों में सब चीज़ें पैदा होने पर भी वहाँ के लोग निर्धन ही बने रहते हैं। हाँ, एक बात की कमी यहाँ ज़रूर है, वह यह कि यहाँ के लोग शिक्षित नहीं हैं। पढ़ते-लिखते बहुत कम हैं। विद्वानों की संगति भी इन्हें कम पसन्द है। यदि ये लोग सुशिक्षित भी होते तो इनके बराबर सुखी जाति इस भारत में दूसरी नहीं थी। यहाँ हम एक हास्यप्रिय यात्री की डायरी से कुछ अंश उद्धृत करते हैं—

"कई दिनों तक रेल में सफ़र करके मैं मारवाड़ के स्टेशन पर, जहाँ मुझे उतरना था, सबेरे सूर्योदय के साथ पहुँचा। वहाँ का दृश्य मेरे लिए बिल्कुल नया था। चारों ओर रेतीला मैदान, उसके बीच में छोटा सा स्टेशन, स्टेशन पर बहुत से मारवाड़ी गड़बड़-गड़बड़ कर रहे थे। उनकी भाषा मैं समझ नहीं सकता था। उस स्टेशन से वह शहर, जहाँ मुझे जाना था, आठ या दस कोस दूर था। मैंने एक मारवाड़ी को भद्र भेस में देख कर पूछा—अमुक शहर यहाँ से कितनी दूर और किधर है ? वह अपनी किसी धुन में था, इसलिए उसने

कहा—"बेरो कोनी" ❁। मैं नहीं समझ सका कि यह "बेरो कोनी" क्या है। दूसरे से पूछा, वह न जाने क्या कह गया। अन्त में जब रेलगाड़ी स्टेशन से चली गई तब मैं स्टेशन-मास्टर के पास गया और उससे अपना अभिप्राय प्रकट किया। स्टेशन-मास्टर भला आदमी था। उसने एक ऊँटवाले को बुलाकर मेरे हवाले किया और कहा, यह आपको अमुक शहर तक पहुँचा देगा। मैंने ऊँटवाले से पूछा—तुम्हारे पास क्या सवारी है? उसने कहा—ऊँट।

"ऊँट का नाम सुनते ही मेरे कान खड़े हो गये। उस दिन के पहले मैंने कभी ऊँट पर पैर भी नहीं रक्खा था। पैर रखना तो दूर रहा, ऊँट को छुआ भी नहीं था। मुझे अवाक् देख कर स्टेशन-मास्टर हँसने लगा। उसने कहा—बाबू, यहाँ ऊँट की ही सवारी मिलती है। डरिये मत, ऊँट अच्छा चलता है। मैं अपने मन में कहने लगा—स्टेशन-मास्टर पागल है। कहता है ऊँट अच्छा चलता है। अन्त में मैं यह सोच कर स्टेशन के बाहर आया कि शायद कोई और सवारी मिल जाय, परन्तु वहाँ तो ऊँट ही ऊँट दिखाई पड़े। मुझे देखते ही सब ऊँटवाले आपस में कहने लगे—"यह टोपीवाला कौन आया? यह टोपीवाला कौन आया?" उनमें से कई मेरे पास दौड़ कर आये। मैं उनकी बोली बहुत कम समझता था। वे न मालूम क्या ऊटपटाँग बक जाते थे। मैंने एक ऊँटवाले को ठीक

❁ बेरो कोनी = मालूम नहीं।

किया। उसने मेरा बिछौना ऊँट पर फैला कर बाँध दिया और ट्रंक पीछे बाँध दिया। मैं ऊँट पर जा बैठा। वह उठ कर खड़ा हुआ। मुझे ऐसा मालूम हुआ कि मैं हिमालय पहाड़ की चोटी पर बैठा हूँ। मुझे अपनी दशा पर बड़ी हँसी आई। ऊँटवाला भी मेरे आगे बैठ गया था। वह ऊँट की नकेल हाथ में पकड़ कर मुँह से अस्पष्ट शब्द करता था और कभी-कभी ऊँट को गाली देता था तब ऊँट भगवान् चलते थे।

"ऊँट लचर-मचर चलने लगा। मेरे पेट की थैलियाँ उलट-पुलट होने लगीं। जाँघ, कमर और पीठ में दर्द होने लगा। जाँघ के नीचे कई जगह का चमड़ा छिल भी गया। मैंने ऊँट वाले से कहा कि भाई! ऊँट को धीरे-धीरे ले चलो। उसने कहा—धीरे-धीरे ले चलने से पहुँचोगे कब? मैंने दुःखी होकर कहा—वहाँ पहुँचने के पहले ही मैं स्वर्ग पहुँच जाऊँ, क्या तुम इसी में प्रसन्न हो। मालूम नहीं, ऊँटवाला कुछ समझा या नहीं। वह फिर ऊँट को भदर-भदर दौड़ाता ले चला। ऊँट पर बैठे-बैठे मेरा जी उकता गया। टाँगों में घोर पीड़ा होने लगी, यकायक मेरे विचार में एक नई बात पैदा हुई। मेरा ध्यान उस ओर ऐसा खिंच गया कि थोड़ी देर के लिए मैं सारे दुःख-दर्द को भूल गया। वास्तव में मैंने एक नवाविष्कार किया और संसार में इस नई खोज का यश केवल मुझे ही मिलना चाहिए। डार्विन साहब का यह सिद्धान्त है कि पूर्वकाल में मनुष्यों के पूँछ होती थी। धीरे-धीरे पूँछ छोटी

होती गई और अन्त में उसका चिह्न भी मिट गया। परन्तु डार्विन साहब ने यह नहीं लिखा कि पूँछ छोटी कैसे होती गई, और यदि स्वभावतः छोटी होती गई तो यही क्रम अन्य पशुओं में क्यों नहीं पाया जाता। मनुष्य की पूँछ नष्ट हो गई तो अन्य पशुओं की भी नष्ट हो जानी चाहिए थी। बात यथार्थ में यह थी कि डार्विन साहब को पूँछ के घटने का यथार्थ कारण स्वयं ज्ञात न था। यदि वे मारवाड़ में आये होते और ऊँट पर चढ़े होते तो उनको अनुभव होता कि ऊँट पर चढ़ने ही से पूर्वकाल के मनुष्यों की पूँछ घिस गई और फिर बिना पूँछ के आदमी पैदा होने लगे। मारवाड़ से ही बिना पूँछ के मनुष्यों की सृष्टि हुई है। परन्तु इस नवाविष्कार का यश तो मुझे मिलना था, इससे डार्विन साहब की समझ में यह बात नहीं आई।"

मारवाड़ी लोग बड़े ही कष्ट-सहिष्णु और घोर परिश्रमी होते हैं। महाजनी हिसाब-किताब में तो इतने दक्ष होते हैं कि मानों माँ के पेट से ही सीखे-सिखाये निकलते हैं। उनके धार्मिक रीति-रस्म कट्टर हिन्दुओं के से होते हैं। वे स्वभाव के उदार और दानप्रिय होते हैं पर पैसे की कमाई में बड़े स्वार्थी और मितव्ययी होते हैं। व्यापार के रहस्य को खूब समझते हैं।

मारवाड़ के ब्राह्मणों की दशा बड़ी ही हीन है। उनमें शिक्षा-प्रचार नहीं, कोई व्यवसाय नहीं। दिनभर बेकार बैठे

रहना, गाँजे-चरस के दम लगाना, औरों की निन्दा का निस्स्वार्थ बुद्धि से प्रचार करना और लड़ना-झगड़ना, यही उनके मुख्य काम हैं। अब उनमें जागृति हो चली है। कुछ शिक्षित और विद्याव्यसनी निकल आये हैं। सम्भव है, शीघ्र ही इन ब्राह्मणों की दशा सुधर जाय।

मारवाड़ में ग़रीबों को बहुत कष्ट है। क्योंकि वहाँ कोई स्थानीय व्यापार नहीं, कोई पेटभरू काम-धन्धा नहीं। वे बड़ी बुरी तरह अपने दिन काटते हैं।

ईश्वर से प्रार्थना है कि वह मारवाड़ियों के परिश्रम, कष्ट सहने की शक्ति, व्यापार-बुद्धि, सहयोग और संगठन का स्वभाव आदि गुणों से देश के अन्य प्रान्तों को भी विभूषित करे और उनके दुर्गुणों को दूर करे।

———

लक्ष्मी

पहला परिच्छेद

बहुत दिन पहले की बात है कि:—

एक सजे-सजाये कमरे में, .कुर्सी पर एक अठारह वर्ष का युवक बैठा था। उसी के पास, ज़मीन पर बिछी हुई, चटाई पर एक नवयौवना सुकुमारी सिर नीचा किये बैठी थी और अपने पैर के अँगूठे के नख को हाथ की उँगलियों से कुचर रही थी।

युवक का चेहरा बालकपन में सुडौल और सुन्दर रहा होगा परन्तु उस समय तो वह फीका और निस्तेज था। उस पर श्यामता छाई हुई थी। देखनेवाला बुद्धिमान् हो तो वह चेहरा देखते ही यह अनुमान कर सकता था कि यह युवक दुराचारियों की सङ्गति में रहता है। कुछ क्षण के बाद उन दोनों में इस प्रकार बातचीत होने लगी।

युवक—लक्ष्मी! मैं तुमसे आज एक बात पूछने आया हूँ, सच-सच उत्तर देना। उस बात से मुझे स्वयं बहुत दुःख है, और सम्भव है, उसे सुनकर तुमको मुझसे भी अधिक दुःख

हो। यदि वह बात सच निकली तो समझ रखना कि हमारी तुम्हारी यही अन्तिम मुलाक़ात है।

युवक की बातें सुन कर युवती डर गई। किसी आगन्तुक भय की आशङ्का से उसका हृदय व्याकुल होने लगा। युवती ने सिर उठाया। आहा! कैसा सुन्दर मुख है, बड़ी-बड़ी आँखें हैं, सीधी पतली-सी नाक है, रङ्ग गोरा है, ललाट तेजोपूर्ण और अर्द्धचन्द्र के समान प्रकाशित हो रहा है; परन्तु अभी युवक ने जो विषाद उसके हृदय में उत्पन्न कर दिया है उसका चिह्न उसके मुँह पर साफ़-साफ़ झलक रहा है। युवती ने युवक के मुख की ओर देखते हुए हाथ जोड़ कर कहा—प्राणनाथ! आप मुझसे कौनसी बात पूछना चाहते हैं? मेरे हृदय की कौनसी बात है जिसे आप नहीं जानते! आप मेरे हृदय के देवता हैं। मैं आपकी दासी हूँ। मैंने अपना तन, मन, धन सब आपको अर्पण कर दिया है। मेरी कोई बात आपसे छिपी हुई नहीं है। हे हृदयेश्वर! मैं रात-दिन आप ही की मूर्ति हृदय में धारण करके उसी के प्रेम में मग्न रहती हूँ, यही बात शायद आपसे छिपी हो।

युवक ने कुछ रूखे स्वर में कहा—तुम पढ़ी-लिखी हो, मैं मूर्ख हूँ। मुझे तुम बातों में बहकाया चाहती हो, परन्तु मैं भी कुछ ऐसा-वैसा नहीं हूँ, तुम्हारी जैसी बीसों स्त्रियों को राह पर लगा चुका हूँ। तुम मुझे अपने हृदय में रखती हो, सो ठीक है, बहुत ठीक है। मैं तुम्हारे हृदय में काँटे की तरह मौजूद

हूँ। मैं तुम्हारे हृदय का काँटा हूँ। बातें बनाना तुमको बहुत आता है। पढ़ी-लिखी हो न। पढ़ी-लिखी होने से अपने किसी प्यारे को अपने मन की बात लिखकर ज़ताना बहुत सहज काम है। मैं मूर्ख हूँ, तुम्हारी चिट्ठी पढ़ नहीं सकता, इसी से तुम मुझसे बहुत प्रेम रखती हो।

यह कह कर युवक युवती के हृदय को बेध देनेवाली हँसी में हँस पड़ा।

युवती पहले ही युवक की बातें सुनकर घबड़ा चुकी थी। इस बार की बात से उसके हृदय में बड़ी ही चोट लगी। उसकी आँखें डबडबा आईं। आँसू भरी आँखों से युवक की ओर देखती हुई वह बोली—

"नाथ! आप यह क्या कहते हैं। मालूम होता है, आपको किसी ने मेरे विरुद्ध बहकाया है। हे प्राणेश, आपका क्रोध सहन करने की मुझमें शक्ति नहीं है। हे मेरे हृदय! आपका मुझ पर झूठा ही सन्देह हुआ है। पढ़ने-लिखने से कोई बुरा नहीं हो सकता।"

युवक बीच ही में बोल उठा—पढ़ने-लिखने से कोई बुरा नहीं हो सकता, बुरा तो न पढ़ने-लिखने से होता है। इसी से तो मैं बुरा हूँ। मुझे तुम प्राणेश और हृदय मत कहा करो, बल्कि "हृदय का काँटा" कहा करो। अब मैं तुम्हारे हृदय में काँटे की तरह चुभा करूँगा।

युवती रो पड़ी। उसे चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार

दिखाई पड़ने लग गया। और कोई अवलम्ब न पाकर उसने युवक का पैर पकड़ लिया। वह रोकर कहने लगी—हे प्राणेश्वर, आपकी बातें मैं बिलकुल नहीं समझती हूँ। आप मुझसे इतना क्रुद्ध क्यों हो गये! किस दुष्ट ने मेरे विषय में आपके चित्त में भय उत्पन्न कर दिया। हे प्राणपति! आप अब मुझे अधिक दुखी मत कीजिये, इतना ही दुःख मेरे लिए असह्य हो रहा है। आप जो कुछ कहें खुलासा कहें।

युवक के चेहरे पर क्रोध और घृणा के चिह्न दिखाई पड़ने लगे। उसने कहा—स्त्रियाँ रोने में बड़ी प्रवीण होती हैं। स्त्री-चरित्र को मैं ख़ूब अच्छी तरह समझता हूँ। तू मीठी-मीठी बातों में फँसा कर मुझे धोखा नहीं दे सकती। मैं तेरा पति नहीं, तेरे प्राण का पति हूँ। देख, तेरा हृदय सच-सच गवाही दे रहा है। अब मैं तेरा प्राण ही लूँगा। मुझे तेरी कुछ ज़रूरत नहीं है। पापिनी! दुराचारिणी!! मैं तेरा मुँह भी देखा नहीं चाहता। चल, दूर हट।

यह कह कर और युवती की पीठ पर एक लात जमा कर युवक कमरे से बाहर चला गया। युवती, लात की चोट से नहीं, बल्कि मनोवेदना से मूर्च्छित होकर गिर पड़ी।

❀ ❀ ❀ ❀

कमरे के दरवाज़े की आड़ में एक आदमी खड़ा-खड़ा युवक और युवती की बातें सुन रहा था। युवक को बाहर जाते देख कर वह भी पीछे-पीछे चला। बाहर, बैठक में, आकर युवक एक मसनद के सहारे बैठ गया। शाम का वक़्त था। उस

समय बैठक में और कोई नहीं था। मुनीम-गुमाश्ता सब अपना-अपना काम बन्द करके सन्ध्या-शौच के लिए चले गये थे। वह आदमी जो कमरे से युवक के पीछे-पीछे आया था, युवक के सामने घुटने टेक कर बैठ गया और उसके कान के पास मुँह अड़ा कर कहने लगा—देखिए, मैं जो कहता था वह बात ठीक निकली न?

युवक—क्या तुमने हमारी सब बातें सुन लीं?

आदमी—जी हाँ, मैं तो दरवाज़े के पास ही खड़ा था। देखिये, स्त्रियों का चरित्र समझना बड़ा कठिन काम है। आपकी बातें सुनते ही वह रोने लगी, जैसे कुछ जानती ही नहीं, अभी नन्हीं सी बच्ची है।

युवक—परन्तु मेरे सामने तो उसकी एक भी नहीं चली। वह पढ़ी-लिखी है और मैं अपढ़ हूँ तो इससे क्या? मैंने उसे बातों में ऐसा लथेड़ा कि वह भी याद रक्खेगी। तुमने सुना, मैंने उसकी बातों का ऐसा जवाब दिया कि उसकी अक़ल चक्कर खाने लग गई।

आदमी—आप पढ़े-लिखे नहीं हैं तो क्या हुआ? आपकी बुद्धि के आगे बड़े-बड़े पण्डित चकरा जाते हैं। आपके जैसा समझदार और बुद्धिमान् आदमी तो इस शहर भर में कोई नहीं है।

युवक—परन्तु वह तो मुझे मूर्ख ही समझती है।

आदमी—तभी तो उसकी दुर्दशा हो रही है।

युवक—आज से तो मैंने उसके पास जाना ही छोड़ दिया है। गङ्गाराम से कह दो कि मेरा बिछौना बाहरवाले कमरे में उठा लावे। (कुछ सोचकर) हाँ, तुम एक काम करो कि अब तुम कभी यदि लक्ष्मी को देवा से बातचीत करते देखो तो झट मुझे उसकी सूचना दो। मैं स्वयं उन दोनों को उचित दण्ड दूँगा। तुमने मुझे लक्ष्मी के हाथ की लिखी हुई चिट्ठी तो दिखाई परन्तु एक चिट्ठी देवा के हाथ की लिखी हुई, जो लक्ष्मी के पास आई हो, चुरा कर ला दो। तब मैं उन दोनों की अच्छी ख़बर लूँगा।

आदमी बोला—बहुत अच्छा; इस बार जो चिट्ठी देवा की आवेगी तो मैं उसे ला कर अवश्य दिखाऊँगा। (कुछ रुक कर) परन्तु आप लक्ष्मी से मेरा नाम मत ले दीजिएगा। नहीं तो देखिए, मैं ग़रीब आदमी हूँ, आप दोनों स्त्री-पुरुष तो फिर एक हो जायँगे और मैं दूध की मक्खी की तरह निकाला जाऊँगा।

युवक ने कहा—तुम निश्चिन्त रहो।

वह आदमी वहाँ से उठ कर चला गया। युवक भी कपड़े पहन कर किसी मित्र से मिलने के लिए बाहर चला गया।

पाठकों को अधिक उलझन में न फँसा कर यहाँ हम इन लोगों का परिचय दिये देते हैं।

युवक का नाम सुन्दरमल था। यह मारवाड़ के एक नामी

शहर के एक प्रतिष्ठित सेठ मङ्गलचन्द का लड़का था। सुन्दर-मल की पन्द्रह वर्ष की अवस्था में सेठ मङ्गलचन्द का देहान्त हो चुका था। बड़े आदमियों के लड़के प्रायः लाड़-प्यार अधिक होने ही के कारण बिगड़ते हैं। सेठ मङ्गलचन्द ने तीसरा विवाह किया था। दो स्त्रियाँ बिना सन्तान के ही मर गई थीं। सुन्दर-मल उनकी तीसरी स्त्री के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। अतएव वृद्धावस्था में केवल एक ही पुत्र होने के कारण सेठ मङ्गलचन्द सुन्दरमल को बहुत प्यार करते थे। सुन्दरमल एक दिन भी गुरु के पास नहीं गया और घर पर भी उसने कुछ नहीं सीखा, कोरा मूर्ख रह गया। सेठ मङ्गलचन्द के मरने के बाद सुन्दरमल ही उनकी सारी सम्पत्ति का मालिक हुआ। सुन्दरमल की स्त्री का नाम लक्ष्मी था। वह पढ़ी-लिखी थी। परन्तु मूर्ख के साथ एक पढ़ी-लिखी कन्या का अयोग्य विवाह कभी सुखदायक नहीं होता। इसी से यद्यपि लक्ष्मी एक पतिव्रता युवती थी, और कभी स्वप्न में भी अपने पति की सेवा से विमुख नहीं हुई परन्तु सुन्दरमल की तरफ़ से उसे सुख नहीं था। ऊपर पाठक पढ़ ही चुके हैं कि सुन्दरमल अपनी लक्ष्मी के आचरण पर सन्देह करके किस प्रकार उसका हृदय दुखा आया था।

सेठ मङ्गलचन्द का कुटुम्ब बहुत बड़ा नहीं था। जिस समय का यह हाल लिखा जाता है उस समय उस परिवार में सुन्दरमल, सुन्दरमल की स्त्री लक्ष्मी और सुन्दरमल की

माँ मोहिनी के अतिरिक्त एक मुनीम और दो-तीन नौकर-चाकर भी थे। नौकरों में माँगीलाल रसोइया, जिसे लोग "माँगिया" कह कर पुकारते थे, सेठ मङ्गलचन्द के समय से ही नौकर था। गङ्गाराम एक माली था, जो पानी लाने और घर में झाड़ू आदि देने का काम करता था। इनके सिवा एक नौकरनी थी जो बर्त्तन माँजती, और बाक़ी समय मोहिनी के पास बैठ कर गप्प हाँकने में बिताती थी। मुनीम के विषय में आगे के परिच्छेद पढ़िए।

दूसरा परिच्छेद

नौकर सदा इस बात की चेष्टा करते हैं कि मालिक उनके वश में आ जाय। यदि नौकर पुराना हुआ और मालिक नया, तो वे ख़ूब अपने हाथ-पैर फैलाते हैं। वे रात-दिन यही सोचा करते हैं कि किस प्रकार मालिक सारा काम उन्हीं की सम्मति से करे। वे यह नहीं जानते कि उनमें योग्यता कितनी है परन्तु सम्मति सब कामों में देने के लिए तैयार रहते हैं।

मालिक मूर्ख हो तो मूर्ख नौकरों की अच्छी बन आती है। क्योंकि जब मूर्ख मालिक किसी बात का प्रस्ताव करता है तब, चाहे वह कितनी ही भद्दी बात हो, मूर्ख नौकर बड़ी प्रशंसा के साथ उसका अनुमोदन करता है। परन्तु बुद्धिमान्

नौकर ऐसा नहीं कर सकता; वह उचित को उचित और अनुचित को अनुचित ही कहेगा। ऐसे नौकर मूर्ख मालिक के यहाँ कम ठहरते हैं।

माँगिया पुराना नौकर था। सेठ मङ्गलचन्द के समय में तो वह नौकर की तरह रहता था परन्तु उनके मरने के पश्चात् वह हर एक बात में सुन्दरमल को दबाये रखता था; किन्तु उसके आचरण से लक्ष्मी प्रसन्न नहीं थी। उसने माँगिया की चोरी कई बार पकड़ी थी परन्तु पुराना नौकर समझकर मोहिनी ने उसे नहीं निकाला। इसका परिणाम यह तो नहीं हुआ कि माँगिया की चोरी करने की आदत छूट गई, हाँ यह अवश्य हुआ कि वह लक्ष्मी से द्वेष करने लगा।

मुनीम का नाम शोभाराम था। वह भी सेठ मङ्गलचन्द के समय से ही नौकर था। वह बड़ा विश्वासी और स्वामिभक्त था। घर-गृहस्थी का अच्छा प्रबन्ध करने के सिवाय वह कलकत्ते की सुन्दरमल की दूकान को भी सँभाल रखता था। सेठ मङ्गलचन्द के मरने के पश्चात् यद्यपि सुन्दरमल अपढ़, अशिक्षित, दुराचारी और कुसंगति में फँसा हुआ था परन्तु मुनीम की बुद्धिमानी से व्योपार में कुछ हानि नहीं होने पाई। मुनीम के काम से मोहिनी भी बहुत प्रसन्न थी। इसी से उसने व्योपार का सारा कार्य-भार मुनीम पर ही छोड़ रक्खा था।

सुन्दरमल के एक कुटुम्बी विलासराय थे। विलासराय

का काम-काज सुन्दरमल से अलग था। परन्तु वे सुन्दरमल को अपने हाथ में रखने की बड़ी ही ताक में थे। कारण यह था कि सुन्दरमल के पास कई लाख की सम्पत्ति थी, परन्तु विलास-राय के पास उतना धन नहीं था। इससे वे चाहते थे कि सुन्दरमल को अपने हाथ में करके उसकी सम्पत्ति के अधिकारी बन बैठें। इसके लिए उन्होंने बहुत से जाल फैलाये, और उनका प्रयत्न सफल भी हुआ, परन्तु पाप का परिणाम बहुत ही भया-नक निकला। आगे चल कर पाठकों को सब बातें मालूम होंगी।

विलासराय की इच्छा का हाल तो पाठकों को मालूम ही हो गया, अब हम उनकी शकल-सूरत के विषय में भी थोड़ा बतला देना उचित समझते हैं क्योंकि शकल-सूरत से भी मनुष्यों की प्रकृति का बहुत कुछ पता चल जाता है।

जिस समय की यह बात लिखी जाती है उस समय विलास-राय की अवस्था पैंतालीस और पचास वर्ष के भीतर थी। शरीर का रङ्ग ऐसा काला था, जैसे अफ़ीम को आदमी के साँचे में ढाल कर बनाया गया हो। सूर्यास्त होने के पश्चात् जब विलास-राय सफ़ेद कुर्ता पहन कर रास्ते में चलते थे तब ऐसा मालूम होता था कि ज़मीन से डेढ़ हाथ की उँचाई पर केवल कुर्ता ही चला जाता है। बिना हाथ लगाये कोई यह नहीं जान सकता था कि उनके मस्तक पर और कान के आस-पास बाल कहाँ तक थे। आँखों और मुँह की बनावट ऐसी भयानक थी कि वे डाकू ऐसे दिखाई पड़ते थे। मोंछ के स्थान पर दो-चार बाल

घास की तरह उगे हुए थे। शरीर मोटा और लम्बा तथा पेट निकला हुआ था। इसी आकार-प्रकार के लोग बहुत से अच्छे भी हैं परन्तु विलासराय उस श्रेणी में गिने जाने योग्य मनुष्य नहीं थे।

लोग कहते हैं कि एक बार युवावस्था में जब विलासराय ससुराल गये थे तब आँगन में बहुत सी सुन्दरी गौराङ्गी स्त्रियाँ उनको घेर कर बैठ गईं। बीच में वे बैठे थे। यह शोभा देख कर एक युवती ने मुसकुरा कर कहा था–"वाह वा! आप तो ऐसे भले मालूम होते हैं, जैसे गोपियों के बीच में कृष्ण।" उसकी बग़ल में एक युवती और बैठी थी। वह पहली से भी बढ़ी-चढ़ी निकली। उसने कहा—"बहन, तुमने ठीक उपमा नहीं दी। ये तो ऐसे भले लगते हैं जैसे कढ़ी में कोयला।" यह सुन कर सब स्त्रियाँ तो ज़रूर खिलखिला पड़ी होंगी, परन्तु विलासराय के मन की क्या दशा हुई होगी, उसे वे या परमेश्वर ही जानते होंगे।

विलासराय अपढ़ नहीं थे। पढ़े-लिखे थे, चतुर थे, अपने मतलब की सब पौराणिक कथाएँ उनको कण्ठस्थ थीं। वे अपनी बातों के साथ दोहे-चौपाइयों का प्रमाण भी देते जाते थे। जो आदमी पहले-पहल उनसे मिलता था उसकी दृष्टि में वे बड़े ज्ञानी, दानी, धर्मात्मा, परोपकारी, सदाचारी और सज्जन जँचते थे। परन्तु दो ही तीन बार की मुलाक़ात में वे अपना असली रङ्ग दिखला देते थे। दो-तीन बार के सिवा वे किसी

को धोखा नहीं देते थे। यह उनमें बड़ा भारी गुण था। जैसे साँप को दूध पिलाने से केवल विष ही बढ़ता है, इसी प्रकार उत्तम-उत्तम कथाओं और उत्तम-उत्तम शिक्षाओं को वे अपनी दुष्टता की पुष्टि करने के काम में लाते थे।

तीसरा परिच्छेद

गर्मी की ऋतु और दोपहर का समय था। सूर्य की प्रखर किरणों से रेत जल रही थी। घर से बाहर निकलते ही शरीर झुलस जाता था। हवा आग की लपट की तरह बह रही थी। धूप के डर से आदमी अपने-अपने घरों में छिपे बैठे थे।

विलासराय एक कोठरी में पलँग पर लेटे थे। काँटों की टट्टी पर जल छिड़का जा चुका था। काँटों में से सोंधी-सोंधी महक निकल रही थी। महात्मा माँगीलाल रसोइया पलँग के पास ज़मीन पर बैठा था। दोनों में धीरे-धीरे इस प्रकार धर्म-चर्चा होने लगी—

विलासराय—कल सुन्दरमल और उसकी बहू में क्या बातचीत हुई?

लक्ष्मी और सुन्दरमल में जो विरोधवार्त्ता हो गई थी, माँगिया ने सब विलासराय से कह सुनाई। सब कथा कह चुकने पर उसने इतना और भी कहा—देखिए सेठ जी, यह

सब मैं आप ही के लिए करता हूँ। ऐसा न हो कि आपका काम हो जाय तो आप मुझे भूल जायँ।

विलासराय अब तक लक्ष्मी और सुन्दरमल के विरोध की बातें सुन कर बहुत प्रसन्न हो रहे थे। हृदय में कुछ उत्तेजना होने से वे उठ बैठे और माँगिया से कहने लगे—क्या तू मुझको कृतघ्न समझता है? तू मेरा काम कर देगा तो मैं भी तुझे ऐसा ख़ुश कर दूँगा कि बस, जब तक जिओ, चैन से बे-फ़िक्र बैठे खाया करो।

यह कह कर विलासराय ने तकिये के नीचे से पचास रुपये के नोट निकाले और माँगिया के हाथ में देकर वे कहने लगे—देख माँगिया, मैं तुझसे बहुत प्रसन्न हूँ। तूने बहुत अच्छा किया जो सुन्दरमल और उसकी स्त्री में विरोध करा दिया। अब तुम एक काम और करो। सुन्दरमल को एकान्त में यह समझाओ कि मुनीम शोभाराम बड़ा चोर है, वह तुम्हारा कुल धन लूटे लिये जा रहा है। सुन्दरमल से शोभाराम का विरोध होने से हमारा काम जल्दी सिद्ध होगा। तुम सुन्दरमल को समझाओ कि वह सब कामों में मेरी सम्मति लिया करे। मैं सच कहता हूँ, यदि तुम मेरा काम कर दोगे तो मैं तुम्हें ख़ुश कर दूँगा। अवसर मिलने पर तुम सुन्दरमल की माँ से भी मेरी बड़ाई करना।

माँगिया—लक्ष्मी बड़ी दुष्ट है। वह मुझे देख कर बहुत जला करती है। मैंने उसे दण्ड देकर अपना हृदय थोड़ा-सा शीतल

किया है। सुन्दरमल का देवा से भी विरोध हो जायगा। अब शोभाराम की भी दाल न गलेगी, और मोहिनी का भी आप पर विश्वास हो जायगा। आप देखते जाइए, मैं क्या-क्या करता हूँ।

विलासराय ने माँगिया की पीठ पर हाथ फेर कर कहा—अच्छा, अच्छा, तू बड़ा चतुर है। मैं तुझे ख़ुश कर दूँगा। आज शाम को सुन्दरमल को लेकर तुम मेरे यहाँ आना।

"बहुत अच्छा" कह कर माँगिया वहाँ से चला गया। उसके जाने के पश्चात् विलासराय आप ही आप धीरे-धीरे कहने लगे—देखो, कैसा दुष्ट है। सेठ मङ्गलचन्द ने इसे दया करके अपने यहाँ नौकर रक्खा और अब यह उन्हीं के कुटुम्ब का नाश कर रहा है। परन्तु बेचारा अपना तो भला ही कर रहा है। इसके द्वारा हमारा बहुत-सा काम सिद्ध होगा, इत्यादि—

माँगिया विलासराय के पास से उठ कर सुन्दरमल के पास गया। सुन्दरमल अपनी कोठरी में अकेला ही पलँग पर लेटा हुआ था। माँगिया उसके सिरहाने की ओर बैठ कर कहने लगा—कुँवरजी, आज सेठ विलासरायजी ने शाम के वक़्त आपको बुलाया है। वे आपसे कोई बात कहना चाहते हैं।

सुन्दरमल ने हँस कर कहा—कौनसी बात है जिसे वे यहाँ आकर नहीं कह सकते! शाम को तो मैं बग़ीचे जाऊँगा। उनसे कह देना कि जो कुछ कहना हो, यहीं आकर कह जायँ।

माँगिया कहने लगा—आप ऐसा न कहिए, सेठ विलासरायजी से आपको मिलना ही चाहिए। वे आपके बड़े शुभचिन्तक हैं। वे आपकी बुद्धि की बड़ी सराहना किया करते हैं। आपके घर में आज-कल बड़ी गड़बड़ मची हुई है। इसी सम्बन्ध में वे कुछ गुप्त बातें आपसे कहना चाहते हैं। उन्हें सुन लेने ही में आपका लाभ है। आप कुछ अपने घर की भी फ़िक्र रक्खा कीजिए। अपनी स्त्री का चरित्र आप देख ही चुके हैं; मुनीम शोभाराम भी विश्वास के योग्य आदमी नहीं।

सुन्दरमल ने पूछा—क्यों, मुनीम शोभाराम ने क्या किया ?

दूसरी ओर मुँह फेर कर माँगिया कहने लगा—कुँवरजी, मैं इस बीच में नहीं पड़ूँगा। मुनीमजी जानें और आप जानें। विलासरायजी इसी विषय में आपसे कुछ कहना चाहते हैं सो जाकर सुन लीजिएगा।

मुनीम शोभाराम के विषय में एक नई बात सुनने की उत्कण्ठा सुन्दरमल के हृदय में पैदा हो गई। उसने शाम को विलासराय से मिलने की प्रतिज्ञा करके माँगिया से कहा—अच्छा, अब तुम जाओ। मैं सोऊँगा।

माँगिया वहाँ से उठकर चला गया। यह वही आदमी है जो पहले परिच्छेद में लक्ष्मी के दरवाज़े के पास खड़ा होकर युवक-युवती की बातें सुन रहा था।

माँगिया बड़ा धूर्त आदमी था। अपने मतलब की बातें वह

सदा सोचता रहता था। वह विलासराय को ख़ुश करके कुछ रुपया ठगने की ताक में था।

सुन्दरमल शाम के वक़्त विलासराय के पास गया। विलासराय ने बड़े प्रेम से उसे पास बैठाया। उस समय जो नौकर-चाकर वहाँ बैठे थे वे सब इशारा पाते ही खसक गये। एकान्त स्थान पाकर विलासराय कहने लगे—

बेटा सुन्दरमल! तुम्हारे पिता हमारा कितना आदर करते थे यह तुम जानते ही हो। उन्होंने मरने के समय मुझसे कहा था कि सुन्दरमल बालक है, उसको सब तरह से सँभाल रखना। मैं उनकी बात को अक्षर-अक्षर याद किये हुए हूँ। मैं रात-दिन तुम्हारी भलाई ही की बात सोचा करता हूँ। परन्तु मुनीम शोभाराम तुम्हारे धन पर अपना ही अधिकार जमाये रखना चाहता है। उसने तुम लोगों को बिल्कुल दबा रक्खा है। तुम जो चाहते हो वह नहीं होता; परन्तु वह जो चाहता है सो तत्काल हो जाता है। वह है तो तुम्हारा नौकर परन्तु तुम्हारा मालिक बना रहता है। तुमसे न तो कुछ सम्मति लेता है, न तुम्हें आमदनी या घाटे का हिसाब समझाता है। तुम्हारे धन से उसने अपना घर भर लिया। देखो, उसका लड़का तुमसे भी अधिक ठाट-बाट से रहता है। मुझसे यह सब देखा नहीं जाता। मैं जब तुम्हारे पिता की बात याद करता हूँ तब मुझसे रहा नहीं जाता। तुम्हारी भलाई की बात तुमको समझा देना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ। तुम मुझे सब तरह

से अपना शुभचिन्तक समझो। यदि तुम मेरी सम्मति के अनुसार चलोगे तो तुम्हारा बड़ा कल्याण होगा। अब तुम अपना काम सँभालने योग्य हुए हो। सीधे-सादे बने रहने से अब काम नहीं चलेगा। मुनीम चाहता है कि तुम मूर्ख बने रहो, जिससे वह धन लूट-लूट कर अपना घर भरे। मुनीम तुमको काम-काज न सिखावे तो मेरे पास आया करो, मैं तुमको पढ़ा-लिखा कर काम-काज में पक्का कर दूँगा। सुनते हो न?

अब तक सुन्दरमल सिर नीचा किये हुए विलासराय की बातें सुन रहा था। उनकी बात समाप्त होते ही उसने सिर उठाया और कहा—अब आप जैसा कहेंगे मैं वैसा ही करूँगा। मुझे भी इस बात की बड़ी चिन्ता लगी रहती है कि मुनीम मुझसे पूछ कर व्योपार का काम क्यों नहीं करता। अब मैं समझ गया कि वह मुझे तृण के बराबर भी नहीं समझता। परन्तु मेरी मा उससे बहुत प्रसन्न है। इसी से मैं कुछ बोल नहीं सकता। हाँ, आप उसकी कुछ चोरी पकड़ दें तो मैं मा को समझा-बुझा कर उसे निकलवा दूँ।

विलासराय सुन्दरमल की पीठ पर हाथ फेरते हुए कहने लगे—बेटा, तू बड़ा बुद्धिमान् है। मैं तुम्हारी बुद्धि देख कर बहुत ख़ुश हुआ। अब से तुम सब काम हमारी सम्मति से किया करो। देखो, मैं शोभाराम को हटा कर तुमको मालिक बना देता हूँ कि नहीं। तुम हमसे प्रति दिन मिला करो।

मैंने तो तुम्हारी बैठक में आना ही छोड़ रक्खा है, परन्तु तुम्हारे लाभ के लिए अब आना ही पड़ेगा।

सुन्दरमल ने कहा—अब आप नित्य मुझे कुछ काम सिखा दिया करें। मैं सब काम आपकी ही सम्मति से करूँगा।

यह कह कर सुन्दरमल वहाँ से चला गया।

चौथा परिच्छेद

सुन्दरमल के हृदय पर अपना प्रभाव जमा कर विलासराय बहुत प्रसन्न हुए। अब वे रोज़ सुन्दरमल को बुला कर उपदेश देने लगे। उनका मकान भी पास ही था, इसलिए वे सुन्दरमल की बैठक में भी बैठने-उठने लगे। धीरे-धीरे उन्होंने लालच देकर सुन्दरमल के सब नौकरों को वश में कर लिया। सभी विलासराय के आज्ञानुसार चलने लगे। इतना ही नहीं, बल्कि उन्होंने सुन्दरमल के सखा-साथियों को भी अपने हाथ में कर लिया। किसी के लिए कपड़े बनवा दिये, किसी के लिए जूते ख़रीद दिये और किसी को कुछ रुपये दे दिये। मतलब यह कि सुन्दरमल के सब साथी विलासराय को कल्पवृक्ष के समान मानने लगे।

अब बात-बात में मुनीम और सुन्दरमल का झगड़ा होने लगा। सुन्दरमल की हठ के आगे मुनीम कोई भी काम नहीं

कर सकता था। एक दिन मुनीम ने झुँझला कर मोहिनी के पास जाकर कहा कि सेठानीजी, अब मुझसे आपका काम नहीं हो सकता। विलासराय ने सुन्दरमल को बहका रक्खा है। वह बात-बात में मुझे झूठा और चोर कहता रहता है। अब आप अपना काम सँभालिए और मुझे छुट्टी दीजिए। मैंने सेठ मङ्गलचन्दजी के समय से आज तक लाखों का लेन-देन अपने हाथ से किया है। अब तक एक पाई के लिए भी मुझ पर सन्देह नहीं किया गया। परन्तु अब मैं देखता हूँ कि मेरा विश्वास नहीं रहा।

सेठानी ने हँस कर कहा—शोभारामजी, सुन्दरमल लड़का है। उसकी बातों पर ध्यान देना ठीक नहीं। तुम जाकर अपना काम करो। मैं सुन्दरमल को बुला कर समझा दूँगी। जब तक मैं तुम्हारा विश्वास करती हूँ तब तक तुम किसी की बात पर कान न दो। विलासराय को मैं अच्छी तरह जानती हूँ। लड़ाई-झगड़ा लगाकर तमाशा देखना उन्हें बहुत अच्छा लगता है।

सेठानी से आश्वासन-वाक्य पाकर मुनीम फिर अपना काम करने लगा।

शाम को जब सुन्दरमल भोजन करने के लिए भीतर गया तब मोहिनी ने उसे बुला कर कहा—बेटा, मुनीम से आज तुम्हारी क्या खटपट हो गई? सुन्दरमल ने उत्तेजित होकर कहा—मा, मुनीम चोर है। हमारा सारा धन उठाये जा रहा है। तुम तो भीतर बैठी रहती हो। तुम्हें तो किसी बात

की कुछ ख़बर है नहीं। मुनीम एक रुपये की चीज़ लाता है तो चार रुपये लिख देता है। ऐसी लूट से भला अपना धन कैसे बचेगा !

आज पहले-पहल, सुन्दरमल के मुँह से ऐसी बातें सुनकर मोहिनी हसने लगी। उसने कहा—बेटा, भगवान् जो तुम्हें बुद्धि देता और तुम स्वयं अपना काम-काज देखने लगते तो मुझे चिन्ता ही किस बात की थी। परन्तु शोभाराम बहुत विश्वासी आदमी है। ऐसा मुनीम मिलना कठिन है। इस पर तुम कभी एक पाई का भी सन्देह न करो। सब नौकरों के साथ एक-सा बर्ताव करना ठीक नहीं। शोभाराम यद्यपि अपना नौकर है परन्तु वह कड़ी बातें नहीं सह सकता। इसलिए जो बात तुम्हारी समझ में न आवे उसे मुलायमियत से पूछ लो। बिना समझे-बूझे किसी को झूठा, चोर बताना ठीक नहीं।

सुन्दरमल ने अभिमान में भर कर कहा—मा, अब मुझे विलासरायजी हिसाब-किताब सिखा रहे हैं। थोड़े ही दिनों में मैं मुनीम की पोल प्रत्यक्ष करके दिखा दूँगा।

सुन्दरमल को मोहिनी मूर्ख समझती थी। इससे वह हँसने लगी।

सुन्दरमल ने फिर कहा—मा, हँसती क्यों है ? क्या मैं झूठ कह रहा हूँ !

मोहिनी ने कहा—बेटा, तुम हिसाब-किताब सीख कर अपना

काम-काज देखो, यह तो मेरे लिए सबसे बढ़कर प्रसन्नता की बात है। परन्तु विलासराय के चंगुल में फँस कर तुम सुखी नहीं रह सकते।

सुन्दरमल ने पूछा—क्यों मा?

मोहिनी ने उत्तर दिया—विलासराय बड़े चालाक आदमी हैं। अपने मतलब के आगे वे दूसरे की हानि नहीं समझते। तुम्हारे पिता मरते समय मुझसे कह गये थे कि सुन्दरमल बालक है। इसे विलासराय के वश में न होने देना। तुम्हारे पिता विलासराय को बड़ा धूर्त, छली और लवार समझते थे। सो बेटा, तुम विलासराय की सङ्गति छोड़ दो। मैं तुम्हारे लिए एक गुरु बुला दूँगी। उससे तुम अपने काम-काज भर के लिए लिखना-पढ़ना सीख लो।

सुन्दरमल ने कहा—मा, वे मेरी बड़ी भलाई चाहते हैं। मैं तो अब सब काम उन्हीं की सम्मति से करूँगा।

मोहिनी ने लम्बी साँस खींच कर कहा—इससे तो तुम्हारा मूर्ख ही रहना अच्छा था।

सुन्दरमल ने मा की बात का कुछ जवाब नहीं दिया। भोजन करके वह बाहर आ गया।

सुन्दरमल और मोहिनी में जो बातचीत हुई थी वह सब विलासराय को, सुन्दरमल के नौकरों से, मालूम हो गई।

———

पाँचवाँ परिच्छेद

विलासराय ने युवावस्था में बहुत सी स्त्रियों के सतीत्व की परीक्षा की थी। उनमें धायी नाम की एक विधवा ने अपने सती-धर्म का अच्छा परिचय दिया था। धायी से उस समय भी विलासराय की मित्रता थी और वह उनकी दूती का काम करती थी।

सुन्दरमल और उसके सब नौकर-चाकर तो विलासराय के वश में आ ही चुके थे, केवल मुनीम और मोहिनी को अभी वे नहीं फँसा सके थे। इन दोनों में से मोहिनी को वश में करना ही वे अधिक आवश्यक समझते थे। इसलिए उन्होंने सब नौकरों से कह दिया कि मोहिनी के सामने हमारी बड़ाई किया करो। बस, कहने की देर थी, मोहिनी के सामने विलास-राय की प्रशंसा की झड़ी लग गई। कोई कहता कि, विलास-रायजी सुन्दरमल को बड़ी अच्छी शिक्षा दे रहे हैं। दूसरा बोल उठता, विलासरायजी इस परिवार की बड़ी भलाई चाहते हैं। तीसरा कहने लगता, विलासरायजी बड़े ही धर्मात्मा आदमी हैं। सुन्दरमल को वे पढ़ा-लिखा कर जल्दी ही पक्का कर देंगे। इसी प्रकार की बातें अब रोज़ मोहिनी के सामने नौकरों के मुँह से सुनाई देने लगीं। नौकरों की मुट्ठी विलासराय ने रुपये

से गर्म कर दी थी। इसी से वे उनकी कीर्त्ति के फौवारे छोड़ रहे थे। प्रति दिन सुनते-सुनते मोहिनी की मति-गति भी बदलने लगी। अब वह भी विलासराय की बड़ाई सुन कर अपने सुन्दर-मल के सुन्दर भविष्य की आशा करने लगी।

इस काम में विलासराय को धायी से बड़ी सहायता मिली। वह प्रति दिन मोहिनी के पास आती, और विलासराय की प्रशंसा का कुछ न कुछ मन्त्र ज़रूर उसके कान में फूँक जाती थी।

पहले परिच्छेद की घटना को पाठक भूले न होंगे। उस दिन से सुन्दरमल लक्ष्मी के कमरे में नहीं गया। वह दूसरे कमरे में सोने और रहने लगा। मोहिनी ने एक दिन उससे इसका कारण पूछा तो वह बिना कुछ उत्तर दिये ही बाहर चला गया। मोहिनी ने अनुमान किया कि स्त्री-पुरुष में कुछ खटपट हो गई होगी। दो-चार दिन में फिर एक हो जायँगे।

धायी को विलासराय ने समझा-बुझा कर पक्का कर दिया था। एक दिन वह मोहिनी से एकान्त में कहने लगी—तुमने कभी यह भी सोचा है कि सुन्दरमल अब लक्ष्मी के पास क्यों नहीं जाता।

मोहिनी ने कहा—आपस में कुछ खटपट हो गई होगी, अपने आप निपटारा कर लेंगे।

धायी बोली—तब तो तुम कुछ नहीं जानतीं। पर मुझे क्या ज़रूरत पड़ी है जो इस बीच में पड़ूँ। बड़े घरों की बड़ी बातें होती हैं। मैं कुछ नहीं बोलूँगी।

मोहिनी ने अब ज़रा ध्यान देकर पूछा—कुछ कहो तो सही, क्या बात है? किस कारण से दोनों में विरोध हो गया है?

धायी ने कुछ खिन्न मन से कहा—मुझसे न कहलाओ। भगवान् सबका लाज-परदा ढके रहें तो अच्छी बात है। किसी की निन्दा करने में अपने को क्या लाभ है? वे जाने उनका करतब जाने। बड़े घर की बहू-बेटी को बहुत सँभल कर चलना चाहिए।

अब मोहिनी के कान खड़े हो गये। उसने आग्रह करके पूछा—धायी, साफ़-साफ़ बताओ। बातों में मुझे उलझाओ मत। क्या तुमने कोई अनुचित बात देखी या सुनी है?

धायी बोली—जब तुम हठ करके पूछती हो तो साफ़-साफ़ कहना ही पड़ेगा। बात यह है कि तुम्हारी लक्ष्मी से और शोभाराम से गुप्त प्रेम है। एक दिन दोनों का रहस्य सुन्दरमल ने अपनी आँखों देख लिया है। इसी से उसने लक्ष्मी से सम्बन्ध छोड़ दिया। देखो, मैंने तुम्हारे आग्रह करने पर यह बात कही है, नहीं तो मुझे किसी की इज्ज़त लेने का क्या प्रयोजन था?

धायी की बातें सुन कर मोहिनी भौंचक सी खड़ी रह गई। उसे लक्ष्मी के विषय में ऐसी बात सुनने की स्वप्न में भी आशा नहीं थी। उसने पूछा—तुमको यह बात कैसे मालूम हुई?

धायी ने कहा—मैंने यह बात देवा की मा से सुनी थी।

उसने मुझे शपथ धरा दी थी कि किसी से कहना मत, सो मैं क्या किसी से कहती हूँ। मैंने तो केवल तुमसे यह बात चलाई है।

धायी की बात सुन कर मोहिनी पर वज्र-सा गिरा। वह अवाक् रह गई। तो क्या लक्ष्मी कुलटा है? क्या मुनीम का चाल-चलन ख़राब है? यही प्रश्न उसके हृदय में बारबार उठने लगे।—मोहिनी को इस तरह शोक में डुबा कर धायी चली गई।

छठा परिच्छेद

लक्ष्मी कई दिनों से उदास रहती थी। जब से सुन्दरमल उसे लात मार कर चला गया तभी से उसकी नींद, भूख, प्यास और मन की शान्ति न जाने कहाँ चली गई। वह रात-दिन उदास रहने लगी। कई बार मोहिनी ने भी इसका कारण पूछा परन्तु लक्ष्मी ने कुछ नहीं बताया। बेचारी रात-दिन भीतर ही भीतर घुलकर काँटा हो गई। उस दिन से उसे किसी ने हँसते नहीं देखा।

धायी की बातों पर मोहिनी को विश्वास हो गया। उसने समझा कि इसी कारण सुन्दरमल अब लक्ष्मी के पास नहीं आता-जाता। अब मोहिनी भी लक्ष्मी को बात-बात में सताने लगी। कभी कहती कि "तुमने मेरे कुल में कलङ्क लगा दिया।"

राय के लिए तो वह नववयस्का ही थी। धायी चिट्ठी लेकर सीधे मोहिनी के पास चली गई। उस समय मोहिनी अकेली बैठी थी। धायी ने उसके हाथ में चिट्ठी देकर कहा—लो, अपनी बहू की करतूत देखो।

मोहिनी कुछ पढ़ना-लिखना जानती है। उसने चिट्ठी को पढ़ा। चिट्ठी में लिखा था—

"मेरी प्यारी

मैं आज नहीं आऊँगा, क्योंकि मुझे कई ज़रूरी काम हैं। एक पुस्तक भेजता हूँ, इसे पढ़ना। बड़ी अच्छी पुस्तक है।

तुम्हारा प्यारा

देवशङ्कर।"

मोहिनी जब चिट्ठी पढ़ चुकी तब धायी कहने लगी—देखा! बड़े घर की बहू का यह चरित्र है। देवा जो तुम्हारे घर रोज़ आता है उसका लक्ष्मी से गुप्त प्रेम है। सबके सामने तो वे दोनों भाई-बहन बने रहते हैं, परन्तु चिट्ठी में वे अपने को छिपा नहीं सकते। देखो वह प्रारम्भ में तो लिखता है, 'मेरी प्यारी' और अन्त में लिखता है 'तुम्हारा प्यारा।' इन प्यारा-प्यारी के करतब से तुम्हारे कुल में कलङ्क लग जायगा।

पत्र पढ़ कर और उसकी व्याख्या सुन कर तो मोहिनी के बदन में आग लग गई। उसका मुँह क्रोध से लाल हो गया। उसने उसी समय ज़ोर से पुकारा—बहू

बहू लक्ष्मी अपने कमरे में बैठी एक पुस्तक पढ़ रही थी।

मोहिनी की पुकार सुन कर वह पुस्तक बन्द करके उसके पास चली आई। मोहिनी के कमरे में पैर रखते ही उसकी लाल-लाल आँखें और क्रोध-पूर्ण मुख देख कर लक्ष्मी डर गई। 'न जाने आज क्या विपत्ति आवेगी' इस आशङ्का से उसका हृदय उथल-पुथल करने लगा।

कमरे में लक्ष्मी के प्रवेश करते ही मोहिनी ने गरज कर कहा—क्योंरी, तू इस कुल में कलङ्क लगाने के लिए यहाँ आई है?

लक्ष्मी ने कहा—मैंने क्या अपराध किया है? आप कई दिनों से ऐसी-ऐसी बातें कह रही हैं, परन्तु मेरी समझ में नहीं आता कि मैंने क्या अनर्थ कर डाला है।

मोहिनी ने दाँत पीस कर कहा—अनर्थ! अभी तू पूछती है कि क्या अनर्थ कर डाला! तू ऐसी अभागिनी है कि जिस घर में पैर रखती है उसका सत्यानाश हो जाता है। आते ही तो तू सुन्दर के बाप को खा गई, अब सुन्दर भी तेरे ही कुलक्षण से घर में पैर नहीं रखता। मेरे कर्म का दोष है जो तेरी जैसी डाकिनी मेरे घर में आई।

मोहिनी का वज्रवाक्य सुन कर लक्ष्मी सहम गई। उसके मुँह से सहसा कुछ बात नहीं निकली। इतने में मोहिनी फिर विष उगलने लगी। उसने कहा—देख, यह चिट्ठी तेरे पास आई थी कि नहीं?

लक्ष्मी ने डरते-डरते कहा—हाँ, देवशङ्कर ने यह चिट्ठी

मेरे पास भेजी थी। परन्तु देवशङ्कर को तो आप जानती ही हैं। वह मेरा भाई है। मुझसे मिलने कभी-कभी यहाँ आया करता है और मैं उससे पढ़ने के लिए पुस्तकें मँगाया करती हूँ। इसमें तो कोई ऐसी बात नहीं है जिससे आपको इतना क्रोध चढ़ आया।

मोहिनी सिंहनी के समान आँखें निकाल कर कहने लगी—देवशङ्कर तेरा भाई है कि तेरा प्यारा! अब तक मैं नहीं जानती थी कि टट्टी की ओट में शिकार खेला जा रहा है। दिखाने के लिए भाई-बहन बने हैं। भला बता तो सही, यह प्यारा-प्यारी क्या लिखा है?

अपने आचरण पर दोष लगता देख कर लक्ष्मी का हृदय कम्पित हो रहा था। उसने पत्र लेकर कहा—इसमें प्यारी के आगे "बहन" और प्यारा के आगे "भाई" शब्द रबर से मिटा दिया गया है।

मोहिनी ने लक्ष्मी के हाथ से पत्र छीन कर कहा—चल, तू मुझे धोखा नहीं दे सकती। देख, आज ही मैं तेरे प्यारे की ख़बर लेती हूँ। और भला यह तो बता कि मुनीम से तेरा क्या सम्बन्ध है?

मोहिनी की इन बातों से लक्ष्मी को मूर्च्छा आ गई। वह धरती पर गिर पड़ी।

धायी ने कहा—देखा! क़लई खुल गई न। जब सब बात प्रकट हो गई तब डर के मारे बेहोश हो गई।

क्रोध के मारे मोहिनी का चित्त बहुत अशान्त हो गया था। उसी समय माँगिया उस कमरे में आ गया। मोहिनी ने कहा—माँगिया, मुनीम को तो बुला ला।

मोहिनी ने धायी को बिदा किया। वह वहाँ से उठ कर विलासराय के पास गई, और अपनी सफलता की बातें उन्हें कह सुनाईं।

सातवाँ परिच्छेद

मुनीम को बुलाने के लिए माँगिया बाहर आया। बाहर उसे पहले ही विलासराय मिले। भीतर का सारा हाल अभी धायी उनसे कह कर गई थी। अतएव विलासराय ने माँगिया को देखते ही पूछा—क्यों, क्या हाल है? माँगिया ने कहा—मुनीम पर आफ़त आई है। सेठानीजी उनको बुला रही हैं। लक्ष्मी के मामले में आज उनकी पेशी है।

विलासराय ने कहा—अभी मुनीम को मत ले जाओ। जाकर कह दो कि मुनीम काम से कहीं बाहर गया है। अभी रंग अच्छी तरह नहीं चढ़ा है। धक्का ऐसा मारना चाहिए कि मुनीम सँभल न सके। अभी तो तुम जाकर सुन्दर की मा से कहो कि एक बार मैं उनसे कुछ बातचीत किया चाहता हूँ।

माँगिया भीतर चला गया। उसने मोहिनी से कहा कि मुनीम तो कहीं बाहर गये हैं। आने पर बुला लाऊँगा।

विलासरायजी आपसे कुछ बातचीत किया चाहते हैं। आप कहें तो उनको बुला लाऊँ।

मोहिनी उस समय क्रोध में थी। उसने अनिच्छापूर्वक कहा—जाकर पूछ आ कि क्या बात कहना चाहते हैं। मुझे उनसे किसी बात में सम्मति नहीं लेनी है। माँगिया ने मामला बिगड़ता देख कर कहा—सेठानीजी, विलासराय तो तुम्हारे बड़े शुभचिन्तक हैं। देखो, वे सुन्दरमल को बड़ी अच्छी शिक्षा दे रहे हैं। वही सुन्दरमल तो है जो बुरे आदमियों के साथ घूमा करता था। कोई जानता ही नहीं था कि यह भी किसी सेठ का लड़का है। परन्तु अब विलासरायजी के समझाने-बुझाने से राह पर आ गया और अपने घर का काम-काज देखने लगा है। विलासरायजी अपनी भलाई की ही बात कहेंगे। उसे सुन लेने में आपका कुछ न कुछ लाभ ही होगा।

यदि किसी स्त्री का कृपापात्र बनना हो तो उसके लड़के को प्यार करना चाहिए। विलासराय सुन्दरमल पर असीम प्रेम प्रकट करते थे। उठते-बैठते, खाते-पीते, रात-दिन वे उसे कुछ न कुछ समझाया ही करते थे। और समझाते भी क्या थे? बस, यही कि नौकरों का विश्वास न करो, अपने इच्छानुसार काम करो, स्त्रियों का विश्वास मत करो, मेरे सिवा और किसी के साथ मत रहो, नहीं तो कोई तुम्हें ठग लेगा; सदा मेरी बात माना करो, मैं जो-जो बातें तुमसे कहता हूँ, कोई पूछे तो उससे मत कहना। मुझसे बढ़ कर तुम्हारा भला

चाहनेवाला अब इस संसार में कोई नहीं है, इत्यादि। मोहिनी प्रतिदिन नौकरों तथा धायी के मुख से विलासराय की प्रेमप्रकृति की कहानी सुना करती थी। जिधर देखो उधर ही नौकर-चाकर और अन्य लोग भी, जो विलासराय के कृपापात्र थे, यही घोषणा करते थे कि सुन्दरमल विलासराय की संगति से सुधर रहा है। अपने पुत्र की प्रशंसा सुन कर किस माता को हर्ष न होगा? सुन्दरमल को पहले लोग मूर्ख कहते थे परन्तु अब सब उसकी बुद्धि की सराहना करने लगे। किसकी कृपा से ऐसा परिवर्तन हो गया? जब मोहिनी यह सोचती तब विलासराय के लिए उसके हृदय में श्रद्धा उत्पन्न हो जाती। एक तरफ़ उसके हृदय में ऐसा नया भाव उत्पन्न हो रहा था, दूसरी तरफ़ पहले ही से यह भाव विद्यमान था कि विलासराय व्यभिचारी, झूठे, लबार और कपटी हैं। इसी कारण मोहिनी विलासराय से घृणा करती थी। परन्तु माँगिया की बातों से कुछ श्रद्धा अधिक बढ़ गई। इसलिए उसने विलासराय को भीतर लाने के लिए माँगिया को भेजा।

विलासराय माँगिया की प्रतीक्षा में खड़े थे। माँगिया ने आकर संक्षेप से अपनी और मोहिनी की बातों का सारांश सुना कर कहा कि चलिये, आपको सेठानीजी भीतर बुलाती हैं।

विलासराय तो यह चाहते ही थे। आगे-आगे माँगिया और पीछे पीछे विलासराय झट मोहिनी के कमरे में जा पहुँचे। मोहिनी ने उनके बैठने के लिए पहले ही से चटाई बिछवा दी

थी। विलासराय चटाई पर बैठ गये। मोहिनी घूँघट काढ़े कुछ दूर पर दीवार से सट कर बैठी थी। कई क्षण तक दोनों चुप रहे। फिर विलासराय कहने लगे—बहुत दिनों से मेरे मन में यह अभिलाषा थी कि एक बार तुमसे कुछ कहूँ। परन्तु कभी ऐसा अवसर न मिला कि मैं तुम्हारे सामने आता। मैं तुम्हारे हित की ही बात कहना चाहता हूँ। यदि तुम्हें बुरी न लगे तो कहूँ।

मोहिनी के घूँघट के अन्दर से आवाज़ आई कि हित की बात भी किसी को बुरी लगती है? आप कहिये, मैं ध्यान से सुनती हूँ।

विलासराय कहने लगे—देखो, मङ्गलचन्द मेरा बड़ा सम्मान करते थे। वे प्रायः सब कामों में मेरी सम्मति लिया करते थे, परन्तु जब से उनका देहान्त हुआ और उनकी सम्पत्ति का मालिक शोभाराम हुआ तब से हमने बिलकुल सम्बन्ध ही छोड़ दिया। यद्यपि मुझे बीच में पड़ने की ज़रूरत नहीं थी परन्तु यदि अपने कुटुम्ब की कुछ हीनता हो जाय तो मुझे इस बात से बड़ी लज्जा आती है। मङ्गलचन्द के मरने के पश्चात् शोभाराम ही मालिक बन बैठा। सुन्दरमल की नौकर के बराबर भी इज्ज़त नहीं रह गई। शहर के बहुत से अपने हित-मित्र मिलते हैं तो मुझे बहुत ही लज्जित किया करते हैं कि तुम्हारे देखते-देखते सुन्दरमल बिगड़ा जा रहा है। शोभाराम चाहता है कि सुन्दरमल कहीं होशियार न हो जाय, नहीं

तो उससे सब अधिकार छीन लेगा। इसी मतलब से उसने सुन्दरमल के साथ बहुत से ऐसे आदमी लगा दिये थे जो रात-दिन उसे बुराई ही की ओर ले जाते थे। भला, मुझसे यह बात कैसे देखी जा सकती थी। हमारा पौत्र इस प्रकार बिगड़े तो इसमें हमारी ही हँसी तो है। इधर मैंने सुन्दरमल को समझा-बुझा कर ठीक कर दिया है। अब वह अपना काम-काज सँभालने योग्य हो रहा है। शोभाराम देखने ही में साधू-सा मालूम होता है, पर है बड़ा कपटी। उसका चाल-चलन बहुत ख़राब है। शहर-भर में उसकी निन्दा हो रही है परन्तु अपने डर से कोई कुछ बोलता नहीं। परन्तु कब तक किस-किस का मुँह पकड़ते फिरेंगे। नंगे-लुच्चे कुछ न कुछ कलङ्क लगाया ही करते हैं। ख़ैर, चाल-चलन ही ख़राब होता तब तक तो साध्य था, परन्तु वह तुम्हारा धन भी तो लूटे जा रहा है। एक रुपये की चीज़ बाज़ार से आती है तो उसको चार लिख लेता है। उसमें भी आधी चीज़ तो यहाँ आती है और आधी उसके घर चली जाती है। उसके घर का ठाटबाट देखो, जिस घर में पहले चूहे भी नहीं जाते थे वही घर अब नौकर-चाकरों से गूँज रहा है। उसका लड़का सुन्दरमल से भी बढ़िया-बढ़िया कपड़े और गहने पहनता है। यह सब तुम्हारे ही धन की महिमा तो है।

इतना कह कर विलासराय थोड़ा रुक गये। वे जानना चाहते थे कि मेरी बातें मोहिनी को अच्छी लगती हैं या नहीं। मोहिनी उनकी बातें बड़े ध्यान से सुन रही थी। विलासराय

के चुप हो जाने पर उसने कहा—मैं तो शोभाराम को बहुत सच्चा और विश्वासी आदमी समझती थी।

विलासराय कहने लगे—यही तो धोखे की बात है। देखने में तो वह बड़ा महात्मा मालूम होता है परन्तु पेट में ऐसी छुरी रखता है कि जिसके मारने से बचना असम्भव हो जाता है। ऐसे आदमी बड़े भयानक होते हैं। इनसे बहुत सावधान रहना चाहिए।

इतना कह कर विलासराय ने अपनी जेब से काग़ज़ के दो टुकड़े निकाले। उनको जोड़ कर उन्होंने मोहिनी के आगे रख दिया और कहा—इसे पढ़ लो। देखो, यह शोभाराम के हाथ की लिखावट है। इसमें लिखा है कि "मैं तुमको एक लाख रुपये दूँगा।" बहुत दिन की बात है कि शोभाराम ने एक चिट्ठी अपने ससुर के नाम लिख कर गङ्गाराम को दी थी। गङ्गाराम वह चिट्ठी लेकर उसके ससुर को देने जा रहा था। मुझे उस चिट्ठी पर कुछ सन्देह हुआ। इसलिए मैंने उसे लेकर खोला और पढ़ा तो शोभाराम पर इतना क्रोध चढ़ आया कि यदि उस समय वह मेरे पास खड़ा होता तो मैं ज़रूर उसे मारता। चिट्ठी में लिखा था कि, "एक दूकान खोल लो, रुपया मैं दूँगा। जो लाभ होगा उसके तीन भाग मैं लूँगा और एक भाग तुमको मिलेगा। दूकान खोलने के लिए मैं तुमको एक लाख रुपये दूँगा।" मैं यह चिट्ठी अपने पास रखना चाहता था परन्तु गङ्गाराम ने कहा कि ऐसा करने से मुनीमजी मुझे निकाल देंगे। तब मैं

वह चिट्ठी लेकर शोभाराम के पास आया और उसे चिट्ठी दिखा कर पूछा—"क्यों शोभाराम, तुम अपने मालिक के धन में से इसी तरह चोरी करते हो ? मङ्गलचन्द तुम्हारा इतना विश्वास करते थे और सुन्दरमल की मा तुम्हारे ही विश्वास पर निश्चिन्त बैठी है। क्या तुम ऐसा ही विश्वासघात करोगे ? भला यह तो बताओ कि लाख रुपये तुम अपने ससुर को कहाँ से दोगे ?" मेरी बातें सुन कर शोभाराम पहले तो सहम गया, परन्तु जब मेरे हाथ में उसने चिट्ठी देखी तब लपक कर मेरे हाथ से चिट्ठी खींच ली। चिट्ठी का इतना भाग मेरे हाथ में रह गया, बाक़ी उसने फाड़ कर फेंक दिया। मैं तबसे इन दो टुकड़ों को बहुत सँभाल कर रक्खे हूँ कि कभी मौक़ा मिले तो तुमको दिखलाऊँ।

विलासराय की बातें मोहिनी के दिल पर जादू की तरह असर कर गईं। अब वह विलासराय को अपना बड़ा शुभ-चिन्तक समझने लगी। उसने कहा—अब तक मैं आपको बहुत बुरा समझती थी, परन्तु आज मैंने जाना कि मैं बड़ी भूल में थी। आप सचमुच मेरी भलाई चाहते हैं, और आज से अब सुन्दरमल को मैं आपको सौंपती हूँ। मेरे कार-बार का भी आप तब तक अपने इच्छानुसार प्रबन्ध करें, जब तक सुन्दरमल अच्छी तरह काम-काज सँभालने के योग्य न हो जाय। मैं अपने मन की बातें आपसे सच कहती हूँ कि मैं आपसे बहुत डरती हूँ। बहुत से लोग आपकी बड़ी निन्दा

करते हैं और कहते हैं कि ये दूसरों का घर बिगाड़ने में बड़े दक्ष हैं, सो कहीं मुझे भी सुन्दरमल की ओर से धोखा न दीजिएगा। मैं अबला हूँ और आज आपका बहुत विश्वास करके तब सुन्दरमल को, और कुछ दिन के लिए अपने काम-काज को भी, आपके सुपुर्द करती हूँ।

विलासराय अपना निर्लोभ प्रकट करते हुए कहने लगे—मुझे अपने ही काम से बहुत कम फ़ुरसत है। मुझे न तो धन की ज़रूरत है और न किसी की ख़ुशामद की। झूठे और चोर आदमी मुझे बहुत बुरे लगते हैं। जो लोग मेरी निन्दा करते हैं उन सबकी मैंने चोरियाँ पकड़ी हैं, परन्तु किसी का नाम लेने का क्या प्रयोजन? उनको अपने दोष तो नहीं दिखाई पड़ते, उलटे मेरी निन्दा करके वे अपने जलते हुए कलेजे को ठण्ढा करते हैं। मङ्गलचन्द के परिवार की इज़्ज़त बनाये रखने ही के लिए मैंने इतना आन्दोलन किया है, नहीं तो मुझे इस बीच में पड़ने की रत्ती भर भी ज़रूरत न थी; और तुम मुझसे डरती हो, सो यह तुम्हारा भ्रम है। मेरे हाथ से कभी तुम्हारा कुछ अनिष्ट नहीं हो सकता। तुम मुझ पर पूरा विश्वास करो। मैं तुमको सती, और स्त्रियों में सबसे बुद्धिमती समझता हूँ। तुम्हारी समझ देख कर तो तुम पर मेरी बड़ी भक्ति है। तुम सती हो, अग्नि के समान हो, मैं तुम्हारे सिर की शपथ खाकर कहता हूँ कि यदि तुम्हारे लिए कभी मेरे मन में बुरे विचार भी उत्पन्न हों तो अग्निदेव मुझे जला कर भस्म करदें।

यदि मैं सुन्दरमल को कभी तुम्हारे विरुद्ध बहकाने की चेष्टा करूँ तो सारा ब्रह्माण्ड मुझ पर फाट पड़े और मैं उसके नीचे पिस जाऊँ। बताओ, अब भी तुम्हारे मन में मेरे लिए कुछ भ्रम है ?

विलासराय की शपथ और प्रतिज्ञा सुन कर मोहिनी का मन बहुत शान्त हुआ। उसने प्रसन्नता-सूचक शब्दों में कहा—नहीं, अब आपके ऊपर मेरा पूर्ण विश्वास है। यह घर आप ही का है। जैसे आप अपने घर की सँभाल करते हैं वैसे ही इस घर को भी सँभालिए।

विलासराय ने कहा—तुम निश्चिन्त रहो। अपना समय पूजा-पाठ, दान-दक्षिणा और भगवद्भजन में बिताया करो; घर-गृहस्थी के झञ्झटों से अब बेफ़िक्र रहो। मैं तुम्हारी सम्पत्ति का बहुत ठीक प्रबन्ध कर दूँगा।

इतना कह कर विलासराय बाहर चले आये।

आठवाँ परिच्छेद

उपरोक्त घटना को हुए कई महीने बीत गये। इस बीच में विलासराय ने सुन्दरमल के घर पर पूर्ण अधिकार जमा लिया। उन्होंने लाख रुपये के उन दो टुकड़े काग़ज़ों को दिखाकर शोभाराम को निकाल दिया। और उसके स्थान पर

एक अपने ही जैसा सर्व-गुण-सम्पन्न मुनीम रक्खा। सुन्दरमल की कलकत्ते वाली दूकान से भी पुराने मुनीम और गुमाश्ते हटा दिये गये और उनके स्थान पर नये मुनीम और गुमाश्ते, विलासराय के मन-मिले मित्र, नियुक्त किये गये। मतलब यह कि अपने इच्छानुसार भीतर-बाहर का प्रबन्ध करने में विलास-राय ने कोई त्रुटि नहीं रहने दी। घर के कर्ता-धर्ता विधाता वेही हो गये। सुन्दरमल उनके हाथ का खिलौना हो गया। वे जो कहते, सुन्दरमल वही करता था। वह अपनी मा मोहिनी के हाथ से भी जाता रहा। सुन्दरमल विलासराय की तरफ़ से परतन्त्र और सबकी तरफ़ से स्वतन्त्र हो गया। मोहिनी को वह तृण के बराबर भी नहीं समझने लगा। यह देख कर मोहिनी भी डर गई कि कहीं ऐसा न हो कि विलासराय सुन्दरमल को बिल्कुल मेरे विरुद्ध कर दें। इस कारण वह अपना समय पूजा-पाठ, व्रत और कथा-वार्ता में बिताने लगी। बाहर के काम-काज के विषय में उसने बोलना ही छोड़ दिया।

पहले-पहल कुछ दिनों तक तो विलासराय ने लोगों को दिखाने के लिए सुन्दरमल को कुछ बही-खाते का काम-काज सिखलाया। परन्तु सम्पूर्ण अधिकार हाथ में आते ही उनकी शिक्षा ने दूसरा रङ्ग बदला। अब वे सुन्दरमल को ऐसी शिक्षा देने लगे कि तुम पढ़-लिख कर क्या करोगे? तुम्हें नौकरी तो करनी नहीं है, मालिक बने बैठे रहो। जब तक हम जीते हैं तब तक तो खेलो-खाओ, पीछे देखा जायगा। भगवान् ने तुमको

इतना धन दिया है कि बैठे-बैठे खाओगे तब भी ज़िन्दगी भर नहीं चुकेगा। धन पास है तो सुख भोगो। सब तरह की फ़िक्र छोड़ दो। तुम अब कुछ काम मत करो। काम करनेवाले बहुत से नौकर हैं।

विलासराय ने देखा कि केवल शिक्षा ही से काम नहीं चलेगा, इसलिए उन्होंने सुन्दरमल के पुराने साथियों को बुला कर कहा कि सुन्दरमल के साथ रहा करो और तुम लोग भी ख़ूब सुख भोगो। एक साथी के कान में उन्होंने धीरे से कहा—अच्छी-अच्छी स्त्रियाँ सुन्दरमल के लिए बुलाया करो। धन की कुछ परवा नहीं। जो ख़र्च होगा, हम देंगे।

बस क्या था, साथियों को इससे अधिक क्या चाहिए था। अब सुन्दरमल साथियों के चंगुल में जा फँसा। नशा और व्यभिचार में वह बहुत धन ख़र्च करने लगा। उसके साथी भी उसे लूटने-खसोटने लगे। अब सुन्दरमल को काम-काज की फ़िक्र नहीं रहती। अब तो वह अपनी मण्डली में बैठ कर दिन भर हँसी-दिल्लगी किया करता था। विलासराय लोगों को दिखाने के लिए कभी उससे कुछ काम-काज करने को कहते तो वह कहता था कि "हमीं काम-काज करेंगे तो नौकर क्या करेंगे? काम-काज करने के लिए धनी थोड़े ही हुए हैं।" उसकी बातें सुन कर विलासराय मन ही मन आनन्दित हो जाते थे।

यहाँ अब हम लक्ष्मी का थोड़ा सा हाल लिखते हैं। हम उसे मोहिनी के कमरे में बेहोश धरती पर पड़े हुए छोड़ आये हैं।

मूच्छित होते ही वह उठा कर अपने कमरे में कर दी गई। कुछ देर के बाद जब उसकी मूर्च्छा जाती रही तब वह उठी। उस समय उस कमरे में वही बर्तन माँजनेवाली नौकरनी बैठी पंखा कर रही थी। लक्ष्मी फिर लेट गई। उसने आँखें बन्द कर लीं। उसके हृदय में भयानक तूफ़ान चल रहा था। उसके चरित्र पर कलङ्क लगाया गया। कलङ्कित जीवन से तो मृत्यु ही अच्छी है। लक्ष्मी लेटे-लेटे अपने जीवन का अन्त करने की युक्ति सोचने लगी। फिर न जाने किसने उसके कान में कहा—"लक्ष्मी, कलङ्कित होकर मरना अच्छा नहीं। मरने के पीछे संसार में यश छोड़ जाना चाहिए, अपयश नहीं। तुम्हारा चरित्र शुद्ध है, लोग उस पर दोषारोपण करते हैं। तुमको उचित है कि अपने को निर्दोष, निष्कलङ्क प्रमाणित करलो तब मरो।" इस बात से लक्ष्मी के हृदय में कुछ साहस आया। वह कहने लगी—मेरा आचरण पवित्र है, दुष्टों के बहकाने से सास को भ्रम हुआ है, विपत्ति आने पर घबराना उचित नहीं। लोगों का भ्रम मिटाना मेरा कर्त्तव्य है।

लक्ष्मी उठ बैठी। उसके इशारे से नौकरनी भी वहाँ से चली गई, तब वह गीता का पाठ करने लगी।

लक्ष्मी घर के लोगों से भी बहुत कम बोलती थी। शहर की बहुत सी स्त्रियाँ इधर की उधर लगाने के लिए मोहिनी के पास आती थीं, और जाते समय लक्ष्मी की भी कुछ ख़ुशामद कर जाती थीं, परन्तु लक्ष्मी उनपर ध्यान नहीं देती थी। उसका

अधिक समय पुस्तकों के पढ़ने में बीतता था। साँझ-सबेरे वह देवपूजन करती और अपने पति के कल्याण के लिए वर माँगती थी। उसका शरीर सूख गया। मानसिक कष्ट बहुत भयानक बीमारी है। इससे सहज में छुटकारा नहीं मिलता। सुशिक्षिता होने पर भी और रात-दिन उत्तम पुस्तकों के पढ़ते रहने पर भी उसका मानसिक कष्ट निर्मूल नहीं हुआ। इसी कारण वह भोजन करने बैठती तो रोटी का एक टुकड़ा भी मुँह में जाना कठिन हो जाता। उसके शरीर में अब अस्थि-चर्म के सिवा मांस नहीं था।

मोहिनी के पास उसके दुःख-सुख में सहानुभूति जताने के लिए बहुत सी स्त्रियाँ आया करती थीं। यदि उनमें से कोई लक्ष्मी को देख लेती तो झट बोल उठती—देखो, बहू कैसी दुबली हो गई है। मालूम होता है, कुछ खाती-पीती नहीं। सेठानी को उचित है कि अब बहू का अपराध क्षमा करें, भूल-चूक सबसे हो जाती है।

उनकी बातें सुन कर लक्ष्मी का हृदय भयङ्कर रूप से आहत हो जाता था। इसी कारण वह बहुधा अन्य स्त्रियों के सामने नहीं आती थी। उसका कमरा ही पिँजड़ा था और उसमें वह निर्दोष विहङ्गिनी अपने दुःख के दिन बिताती थी।

देवा कौन है? देवशङ्कर कौन है? पाठकों के हृदय में यह प्रश्न अवश्य उत्पन्न हुआ होगा। क्योंकि पिछले परिच्छेदों

में इनके नाम कई वार आ चुके, परन्तु इनके विषय में कुछ कहने का हमें अभी अवसर नहीं मिला था।

देवा या देवशङ्कर एक ही व्यक्ति का नाम था। देवशङ्कर को ही लोग "देवा" "देवा" कह कर पुकारते थे। देवशङ्कर एक सेठ का लड़का था। यह भी लखपती था। सुन्दरमल और इसका घर थोड़े ही फ़ासिले पर था। बालकपन में दोनों लड़के साथ-साथ खेला करते थे। सेठ मङ्गलचन्द देवशङ्कर को बहुत प्यार करते थे। सात-आठ वर्ष का होने पर देवशङ्कर तो स्कूल में पढ़ने लगा, परन्तु सुन्दरमल लाड़-प्यार ही में पड़ा रह गया। देवशङ्कर की अवस्था सुन्दरमल से दो वर्ष अधिक थी। जिस समय की ये बातें लिखी जा रही हैं उस समय वह पढ़-लिख कर एक सुशिक्षित युवक हो गया था। सुन्दरमल की स्त्री लक्ष्मी, दूर के नाते से, देवशङ्कर की बहन लगती, और उन दोनों में भाई-बहन के समान प्रीति भी थी। देवशङ्कर दूसरे-तीसरे दिन लक्ष्मी से मिलने आया करता और उसे स्त्री-शिक्षा की अच्छी-अच्छी पुस्तकें पढ़ने के लिए दे जाया करता था।

पढ़े-लिखे आदमियों से दुष्टों को बड़ा भय लगा रहता है। वे उनको एक पैर भी उठाते देखते हैं तो चौंक उठते हैं कि कहीं मेरा कुछ अनिष्ट न हो जाय। यही दशा विलासराय की थी। जब कभी वे देवशङ्कर को सुन्दरमल के पास बैठे देखते तो उनको यह भय हो जाता कि कहीं मेरे ही विषय में कुछ

बात न होती हो। वे किन्हीं दो आदमियों को बातचीत करते देखते तो उनके कान खड़े हो जाते, और वे यह जानने के लिए कि उनमें क्या-क्या बातचीत हुई, बहुत से जाल फैलाया करते थे। उनका एक प्रायवेट नौकर था। वह उनका जासूस था। सुन्दरमल जहाँ-कहीं जाता या जिस किसी से बातचीत करता, वह जासूस उसके साथ जाता और उसकी सारी बातें विलासराय से कह देता था। उन बातों का परिणाम विचार-विचार कर वे उसके फल के निवारण के लिए सावधान हो जाते थे। इतना प्रबन्ध कर रखने पर भी वे देवशङ्कर से बहुत डरते थे। क्योंकि वे समझते थे कि यह पढ़ा-लिखा लड़का न जाने क्या अनर्थ कर डाले। लक्ष्मी के साथ उसका सम्बन्ध बता कर और उसकी चिट्ठियाँ दिखा कर सुन्दरमल से उसका विरोध करा देने का यही कारण था।

देवशङ्कर सचमुच देवता था। उसका आचरण बहुत पवित्र था। न तो वह कभी किसी की निन्दा करता और न बुरे आदमियों का साथ ही करता था, तो भी विलासराय ने उसके आचरण पर कलङ्क लगा ही दिया। बुरे आदमियों का स्वभाव ही ऐसा होता है। वे सुन्दर शरीर में भी, मक्खियों की तरह, घाव ही ढूँढ़ा करते हैं; ऊँट की तरह कल्पवृक्ष में भी काँटे ही ढूँढ़ा करते हैं। बदचलन आदमी चाहते हैं कि सारे संसार का चाल-चलन ख़राब हो जाय, क्योंकि वे अपनी ही मण्डली बढ़ते देख कर प्रसन्न होते हैं।

देवशङ्कर को अपने और लक्ष्मी पर कलङ्क लगाये जाने का समाचार मिल चुका था। क्योंकि सत्य-भाषिणी धायी इस दुर्गन्धि को फैलाने में कब चूक सकती थी। स्त्रियों की डाक अलग होती है। उनका संसार ही न्यारा है। बहुत सी स्त्रियों का यही काम है कि वे स्त्रियों के लिए डाक का काम करती हैं। इधर की उधर और उधर की इधर, स्त्रियों में बात फैलते-फैलते देवशङ्कर के घर जा पहुँची। इससे देवशङ्कर की मा ने उसे लक्ष्मी के पास आने-जाने से रोक दिया। देवशङ्कर को इस बात की बड़ी चिन्ता थी कि उसके कारण लक्ष्मी को दुःख दिया जा रहा है।

देवशङ्कर का भी कारबार कलकत्ते में था। उपरोक्त घटना के कई महीने बाद देवशङ्कर के पिता ने, जो कलकत्ते में थे, व्योपार का काम-काज सिखाने के लिए उसे बुलाया। देवशङ्कर कलकत्ते जाने के लिए तैयार हो गया। बहुत दिनों से उसने सुन्दरमल से मिलना-जुलना छोड़ दिया था, परन्तु कलकत्ते जाते समय उसने उससे एक बार मुलाक़ात करके जाना उचित समझा। इसी लिए वह सुन्दरमल से मिलने गया।

विलासराय ने सुन्दरमल को देवशङ्कर के बिल्कुल विरुद्ध बना दिया था। इसलिए जब देवशङ्कर उसके पास जाकर बैठ गया तब वह पहले-सा प्रेम नहीं प्रकट कर सका। यहाँ तक कि वह देवशङ्कर से एक शब्द भी नहीं बोला। कुछ देर बैठे रहने के पश्चात् देवशङ्कर ने हँस कर कहा—सुन्दर, अब

तो तुम मुझसे बोलते भी नहीं । आज रात को मैं कलकत्ते जाऊँगा । तुमसे मिलने आया हूँ । चिट्ठी-पत्री देते रहना, और किसी चीज़ की आवश्यकता हो तो लिखना, मैं भेज दूँगा ।

सुन्दरमल ने घृणा के साथ कहा--मैं तुम्हारे जैसे आदमियों से नहीं मिलता । तुम कलकत्ते जाओ या यहाँ रहो, मुझसे इन बातों से क्या मतलब ? मैं तुम्हें चिट्ठी न दूँगा और न तुम कभी मेरे पास भेजना । क्या कलकत्ते में मेरी दूकान नहीं है जो तुमसे चीज़ें मँगाऊँगा ?

सुन्दरमल की बातों से देवशङ्कर को क्रोध चढ़ आया । वह केवल इतना ही कह कर वहाँ से उठ कर चला गया कि सुन्दर-मल ! किसी दिन तुम अपनी बातों के लिए पछताओगे ।

भला सुन्दरमल ऐसा जीव थोड़े ही था कि विना उत्तर दिये चुप रहता । उसने कहा—अच्छा, अच्छा, अपना रास्ता देखो, फिर इधर आने की तकलीफ़ मत उठाना ।

देवशङ्कर दरवाज़े से बाहर निकला ही था कि माँगिया सामने आकर कहने लगा--आपको सुन्दरमल की मा बुलाती हैं ।

पहले तो देवशङ्कर को इस कुटुम्ब में किसी से मिलने की इच्छा न हुई, परन्तु वह कलकत्ते जानेवाला था इसलिए मिल कर जाना उचित समझ कर वह माँगिया के साथ भीतर गया । विलासराय ने गंगाराम को इशारा किया कि भीतर जाकर सुन, क्या-क्या बातें होती हैं ।

पहले जब कभी देवशङ्कर मोहिनी के घर जाता तब मोहिनी उसे बड़े प्यार से अपने पास बुलाती, और बातें करती थी। परन्तु आज उसकी आँखों में वह प्यार नहीं था। हृदय का भाव आँखों में साफ़ दिखाई पड़ता था। देवशङ्कर ने मोहिनी को प्रणाम किया।

मोहिनी ने रूखे स्वर में कहा—प्रणाम-असीस की कोई ज़रूरत नहीं। मैं तुमसे साफ़-साफ़ कहे देती हूँ कि आज से हमारे घर मत आया करो, यहाँ आने की कोई ज़रूरत नहीं। तुम्हारा चाल-चलन बहुत ख़राब है।

देवशङ्कर के ऊपर माना वज्र गिरा। उसे कुछ क्रोध भी आया, परन्तु उसने अपने क्रोध को सँभाला और कहा—आप यह क्या कहती हैं? मेरा चाल-चलन ख़राब है? मैं बदचलन हूँ? मैं देखता हूँ कि इस घरवालों को—सबको—किसी ने मेरे विरुद्ध ख़ूब बहकाया है। सुन्दरमल भी मुझे बुरा बताता है और आप भी बदचलन कहती हैं। ख़ैर, मैं यही कहने आया हूँ कि आज से मैं इस घर में फिर नहीं आऊँगा, आज मैं कलकत्ते जाऊँगा। एक बात मैं और कहना चाहता हूँ कि लक्ष्मी पर कोई लाञ्छन मेरे कारण से न लगाओ। लक्ष्मी आपके घर की लक्ष्मी है। उसका निरादर करने से इस घर का कल्याण नहीं होगा। मैं देखता हूँ कि इस घर पर भगवान् की कुछ अप्रसन्नता सी है, इसी कारण तो आप लोग भले को बुरा और बुरे को भला समझने लगी हैं। मैंने सुना है कि

लक्ष्मी को दुःख देने में कोई बात उठा नहीं रक्खी गई है। मैं इस घर का भविष्य देख-सा रहा हूँ। इसलिए कहता हूँ कि अब भी अपनी-अपनी बुद्धि सुधार लो और भले-बुरे की पहचान करके विश्वास करो। मैं अब जाता हूँ। हाँ, मैंने सुना है कि मेरी कोई चिट्ठी पकड़ी गई है, और उसके कारण से मुझ पर अनुचित दोष लगाया गया है। सो एक बार चिट्ठी को ध्यानपूर्वक देखना। सम्भव है, उसमें कुछ शब्द घटाये-बढ़ाये गये हों या वह मेरे हाथ की लिखी न हो।

मोहिनी ने कुछ उत्तर न दिया। देवशङ्कर प्रणाम करके चला गया। लक्ष्मी अपने कमरे के दरवाज़े के पास खड़ी देवशङ्कर की बातें सुन रही थी। घूँघट के भीतर वह रो रही थी और सोच रही थी कि हाय, मुझ अभागिनी के कारण ही देवशङ्कर ऐसे देवता भाई पर लाञ्छन लगाया जाता है। क्या मैं यही सब देखने-सुनने के लिए जीती हूँ!

देवशङ्कर जब लक्ष्मी को निर्दोष कह रहा था तब लक्ष्मी के हृदय में ऐसी व्यथा हुई कि वह खड़ी न रह सकी और वहीं बैठ गई। देवशङ्कर उसके पास से निकला, और लक्ष्मी को बैठी देखकर उसने कहा—बहन, मैं आज कलकत्ते जाऊँगा, तुमको प्रणाम करने आया हूँ।

लक्ष्मी के जी में आया कि एक बार ज़ोर से रोऊँ, परन्तु उसने अपने को सँभाला। देवशङ्कर वहाँ से सीधा अपने घर आ गया और रात को कलकत्ते चला गया।

माँगिया और गङ्गाराम ने आकर विलासराय से सब बातें, जो मोहिनी और देवशङ्कर में हुई थीं, कह दीं। उन्हें सुन कर विलासराय ने कहा—चलो, एक बला तो टली। (कुछ सोच-कर) देखो, तुम लोग इस बात का ध्यान रखना कि फ़ालतू स्त्रियों को भीतर मत जाने देना, क्योंकि ये बड़ी भयानक होती हैं और इधर की उधर लगा कर स्त्रियों का मन बिगाड़ा करती हैं।

माँगिया ने कहा—आजकल सेठानीजी आपसे कुछ रुष्ट मालूम होती हैं। कल धायी आपकी बड़ी प्रशंसा कर रही थी तब उन्होंने कहा कि "क्या झूठी बड़ाई करती हो, उनको भी बे-मालिक का ऐसा दूसरा घर बिगाड़ने को नहीं मिला होगा।" विलासराय ने कहा—इसी से तो कहता हूँ कि ये स्त्रियाँ बहुत भयानक होती हैं। धायी के पहले कोई और स्त्री आई होगी। वह कुछ मेरी निन्दा कर गई होगी। देवा की माँ के पास से भी तो स्त्रियाँ आती होंगी। स्त्रियाँ तो फ़ोनोग्राफ़ हैं। कान में जो भर दो, मुँह से वही निकाल देती हैं। इसलिए तुम लोग भी बाहरी स्त्रियों को बहुत मत जाने दिया करो। कोई फ़ालतू स्त्री भीतर जाती हो तो उससे पूछ लो—कौन हो, क्यों जाती हो ? बिना बुलाये कोई जाती हो तो उसे रोक दो। यही बात सब पहरेवालों को भी समझा दो।

स्वामिभक्त माँगीलाल और गङ्गाराम आज्ञा-पालनार्थ चले गये।

नवाँ परिच्छेद

सुन्दरमल के पुरोहित पण्डित देवदत्त थे। पण्डित देवदत्त कुछ संस्कृत पढ़े-लिखे थे। आचरण भी उनका बुरा नहीं था। वे भी प्रायः कभी-कभी मोहिनी के पास, बुलाने से, आया-जाया करते थे। विलासराय को उनसे भी भय था। वे पुरोहित थे। उनका घर में आना-जाना कौन रोक सकता था। और, दूसरे उनमें कुछ दोष भी नहीं लगा था कि उसी कारण विलासराय उनको दबाते। इसी से विलासराय ने पण्डित देव-दत्त से हेलमेल रखना ही उचित समझा।

पण्डितजी एक दिन सुन्दरमल के पास आ बैठे। सुन्दर-मल भी अकेला ही था, क्योंकि अभी उसके संगी-साथी नहीं आये थे। पण्डितजी ने संस्कृत के सुन्दर-सुन्दर श्लोक कह कर उसका अर्थ सुन्दरमल को समझाया। उसे सुन कर सुन्दरमल को बड़ा आनन्द आया। विलासराय भी पास ही बैठे थे। जितना सुन्दरमल के हृदय में आनन्द बढ़ता था उतना ही, बल्कि उससे भी अधिक, विलासराय के मन में पण्डितजी के लिए द्वेष बढ़ता था। वे सोचते थे—"यह क्रूर ग्रह आज कहाँ से आ पड़ा।" पण्डितजी और सुन्दरमल तो संस्कृत-साहित्य के सुधा-समुद्र में गोते लगा रहे थे। विलासराय सुनते-सुनते उकता

गये थे। वे कहने लगे--पण्डितजी, आज तो बस करो, मुझे कुछ ज़रूरी काम है। और जब तक आप बैठे हैं मुझसे उठा भी नहीं जाता।

पण्डितजी ने कहा--लीजिए साहब, बस करता हूँ।

सुन्दरमल ने मुग्ध होकर कहा--पण्डितजी, आप रोज़ एक घण्टे आया करें, और मुझे उत्तम-उत्तम श्लोक सुना जाया करें।

"बहुत अच्छा" कह कर पण्डितजी उठ गये। सुन्दरमल का प्रेम देख कर विलासराय मन ही मन बहुत कुढ़े। वे भी पण्डितजी के साथ ही साथ उठ कर दरवाज़े के बाहर तक चले। बाहर आकर वे पण्डितजी से कहने लगे—पण्डितजी, आप बड़े विद्वान् हैं। ज्ञान का अमृत आप चुपके ही चुपके पी रहे थे। आज एक बूँद हमें भी देकर तृप्त कर दिया। हाँ, यह तो बताइए कि आपको कपड़ों की ज़रूरत हो तो दस-बीस रुपयों का बनवा लीजिए, और भी कुछ तकलीफ़ हो तो कहिये, हम इसी वक्त प्रबन्ध करा दें।

पण्डितजी बड़े निर्लोभ थे। वे कृतज्ञता प्रकाश करते हुए कहने लगे--सेठ साहब, ईश्वर की कृपा से मैं रूखे-सूखे भोजन और फ़टे-पुराने कपड़ों ही में सन्तुष्ट रहता हूँ। कुछ तकलीफ़ होगी तो आपसे न कहूँगा तो और किससे कहूँगा। विलासराय कहने लगे—अच्छा, आप कपड़ों की माप भेज देना। हम कलकत्ते से कपड़े बनवा कर मँगा देंगे। और सुन्दरमल से

कहकर मैं कल से ऐसा प्रवन्ध करवा दूँगा कि आप रोज़ एक घण्टे आकर रामायण, महाभारत या भागवत अथवा आप जो उचित समझें सुना जाया करें।

पण्डितजी विलासराय की श्रद्धा देख कर बहुत प्रसन्न हुए। पण्डितजी को बिदा करके विलासराय सुन्दरमल के पास आ बैठे और कहने लगे—पण्डितजी विद्वान् आदमी हैं।

सुन्दरमल ने कहा—हाँ, पण्डितजी की बातें याद कर अब तक मेरे मन में बड़ा आनन्द आ रहा है।

विलासराय ने देखा कि यह तो बड़ा रोग लग गया। शीघ्र ही इस रोग की दवा करनी चाहिए, नहीं तो सुन्दरमल हाथ से जाता रहेगा।

विलासराय ने कहा—विद्वान् तो हैं ज़रूर, परन्तु संस्कृत के पण्डित बड़े लालची होते हैं। पण्डितजी बाहर जाकर मुझसे कहते थे कि 'मुझसे कोई कथा सुन लो।' इसी घर की बदौलत तो उनकी जीविका चल रही है, फिर भी कथा सुना कर कुछ द्रव्य कमाने की लालच लगी ही है। और भैया! अभी तुम बच्चे हो, दुनिया का हाल नहीं जानते। पढ़े-लिखे आदमी बड़े भयानक होते हैं। ये अपनी बातों में फँसा कर आदमी को गधा बना देते हैं। देखो न, तुम्हीं पाँच मिनट में देवदत्त के हाथ के पुतले हो गये। इसलिए इनसे सावधान रहो। पढ़े-लिखों की संगति करना बड़ा बुरा है। देवा भी तो पढ़ा-लिखा है। उसका चरित्र तो तुम देख ही चुके।

सुन्दरमल ने कुछ उत्तर नहीं दिया; क्योंकि उसे इन बातों से पण्डितजी की बातें अधिक प्रिय मालुम हुई थीं।

विलासराय ने सोचा कि कल फिर पण्डित आवेगा और जब एक दिन में उसने सुन्दरमल को इतना वश में कर लिया है तब रोज़-रोज़ आकर न जाने क्या कर डालेगा। यह विचार कर उन्होंने सुन्दरमल के साथियों को, जो आ चुके थे, एकान्त में ले जाकर समझाया कि तुम्हारा कल्पवृक्ष तो पण्डित देवदत्त छीननेवाले हैं। आज वे आये थे और न जाने क्या मन्त्र फूँक गये कि सुन्दरमल ने उनको रोज़-रोज़ आकर भागवत सुना जाने के लिए कहा है। सुन्दरमल भागवत सुनने लगेगा तो तुम लोग क्या करोगे? सुन्दरमल भागवत सुन कर भगवान् का भक्त हो जाय तो इससे मुझे तो बड़ी प्रसन्नता है; परन्तु फिर तुम लोग भूखों मरने लगोगे, सो अपनी-अपनी रोटी में आँच लगाओ। ये बातें मैंने तुम्हारी भलाई के लिए ही कही हैं।

सुन्दरमल के साथियों ने कहा—ऐसा कभी न होगा। हम पण्डित-संण्डित की दाल नहीं गलने देंगे।

जब सुन्दरमल अपने साथियों के पास आकर बैठा तब एक साथी ने पूछा—सुनते हैं आप भागवत सुननेवाले हैं। भला पण्डित के हाथ में कहाँ जा फँसे!

सुन्दरमल ने कहा—नहीं यार भागवत कौन सुनेगा। पण्डित देवदत्त आये थे। उनसे दो-चार श्लोक सुन लिये, अब रोज़-रोज़ कौन सुनता है!

साथियों ने कहा—भागवत में क्या रक्खा है। पण्डितों ने अपना पेट भरने के लिए कथा बना रक्खी है।

एक साथी, जो बिलकुल चुप बैठा था, कुछ अधिक ज्ञानी था। उसने कहा—नहीं जी, तुम लोग कुछ जानते भी हो! भागवत में भगवान् श्रीकृष्ण की और गोपियों की रासलीला लिखी है। क्या तुमने कभी रासलीला नहीं देखी? परन्तु अब उसे सुनने से क्या लाभ है? पण्डितजी से कह दो कि तुम तो केवल बाँच कर सुनाते हो और हम लोग उसे करके दिखाते हैं।

यह सुनते ही सारी मण्डली खिलखिला कर हँस पड़ी। साथियों ने बातों ही बातों में पण्डित देवदत्त के प्रेम के अंकुर को, जो सुन्दरमल के हृदय में उगा था, जड़ से खोद कर निकाल डाला।

दूसरे दिन ठीक समय पर पण्डित देवदत्त फिर आये। उनके सामने सुन्दरमल चुप-चाप बैठा रहा, कुछ बोला नहीं। यह देख कर पहले तो पण्डितजी को कुछ अरुचि सी हुई, परन्तु यह सोच कर कि शायद सुन्दरमल हमारी बातें सुनने के लिए ध्यान लगाये बैठा है, वे संस्कृत के उत्तमोत्तम श्लोक बोलने और उसका अर्थ समझाने लगे। परन्तु रङ्ग न जमा। सुन्दरमल का मन कल के जैसा विकसित न हुआ। क्योंकि विलासराय और उसके साथियों ने उसके हृदय पर ऐसा तेल लगाया था कि पण्डितजी का सुधा-स्रोत उस पर टिक न सका। विलासराय और सुन्दरमल के साथी भी पास ही बैठे थे।

पण्डितजी ने समझा कि शायद आज मेरी बातें अधिक मधुर नहीं हैं; इसलिए वे श्लोकों के अर्थ के साथ-साथ उसकी विस्तृत व्याख्या भी करने लगे। व्याख्या करते-करते एक बार पण्डितजी ने कहा—

"संसार का उपकार करना ही इस जीवन का उद्देश्य होना चाहिए। प्रत्येक मनुष्य को उचित है कि वह अपने को संसार का सेवक समझे। अपने कामों से, अपने विचारों से और अपने धन से संसार की कुछ न कुछ सेवा करते रहना प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है। तुम लोग धनी हो, ईश्वर की कृपा से लक्ष्मी तुम्हारे पास है, तुम चाहो तो संसार का अधिक कल्याण—अधिक सेवा कर सकते हो—"

पण्डितजी की व्याख्या अभी समाप्त नहीं हुई थी कि एक साथी बोल उठा—वाह पण्डितजी वाह, अच्छी शिक्षा दे रहे हो; मालिक को सेवक बना रहे हो।

यह सुन कर सारी मण्डली ठट्ठा मार कर हँसने लगी। विलासराय ने हँस कर कहा—तुम लोग बड़े लुच्चे हो।

पण्डितजी चुप हो गये। उन्होंने समझा कि ये लोग पशु-तुल्य हैं; हमारी ही भूल है जो छोटे पात्र में अधिक परिमाण की वस्तु रखना चाहते हैं। ये नहीं समझते हैं तो इनका क्या दोष है। एक बार सब चुप हो गये। सबकी शान्ति को भङ्ग करते हुए विलासराय ने कहा—पण्डितजी! आप विद्वान् हैं, मैं मूर्ख हूँ। आपके सामने मेरा बोलना सूर्य को दीपक दिखाना

है। परन्तु मुझे शास्त्रों में कुछ तत्त्व दिखाई नहीं पड़ता। इन्हें ब्राह्मण लोगों ने पेट भरने के लिए बना रक्खा है। मैं तो सदा सच बोलना, परोपकार करना, आचरण शुद्ध रखना और दूसरे की निन्दा न करना,—इसी को धर्म समझता हूँ। मेरी तुच्छ बुद्धि में सब शास्त्रों का निचोड़ इतना ही है। और मैं यथा-शक्ति इसी के अनुसार चलता भी हूँ।

पण्डितजी ने कहा—शास्त्रों के निचोड़ को आपने ख़ूब समझा है और उसी के अनुसार आप चलते भी हैं। यह बड़ी प्रसन्नता की बात है। परन्तु आप यह क्यों कहते हैं कि शास्त्रों को ब्राह्मणों ने अपना पेट भरने के लिए बनाया है। शास्त्रों में जो ज्ञान भरा हुआ है, वह मनुष्य को बड़े सौभाग्य से मिलता है। शास्त्र पेट भरने के साधन नहीं हैं बल्कि मुक्ति मिलने के साधन हैं।

विलासराय ने कहा—सो तो ठीक है, परन्तु मैं तो ईश्वर का नाम लेना, धर्म करना, और पर-स्त्री को माता के समान समझना ही धर्म मानता हूँ। रात-दिन ईश्वर के भजन में लगा रहता हूँ। जो कुछ बन पड़ता है, धर्म-पुण्य भी करता हूँ और पराई स्त्रियों को बहन-बेटी के समान समझता हूँ।

पण्डितजी ने कुछ विरक्त होकर कहा—तब तो आपको धर्मोपदेश की कुछ आवश्यकता नहीं।

विलासराय पण्डितजी को अप्रसन्न करना भी नहीं चाहते थे क्योंकि उनको भय था कि ये पुरोहित हैं, घर में आते-जाते

रहते हैं, कहीं मोहिनी को मेरे विरुद्ध भड़का न दें। इसलिए उन्होंने पण्डितजी से कहा—पण्डितजी ! आपके उपदेशों से हमारा बहुत लाभ होता है, इसलिए आप दूसरे-चौथे रोज़ पधार कर हम लोगों को अपने उपदेश से तृप्त किया करें। कथा के लिए जो मुझसे आपसे कल बातचीत हुई थी उसके विषय में सुन्दरमल की राय अभी नहीं है, कुछ दिन ठहर कर आपसे कथा सुनी जायगी।

पण्डितजी ने कहा—मैंने तो आपसे कहा भी नहीं कि मुझसे कथा सुनिये, आप ही कल कहते थे। सो सुनिये या न सुनिये, मुझे इसके लिए कुछ शोक नहीं है।

विलासराय ने देखा कि भण्डा तो फूट गया, अब इसे किसी तरह छिपाना चाहिए। इसलिए वे झट बोल उठे—अच्छा पण्डितजी, मेरे साथ ज़रा एकान्त में आइये। मुझे आपसे कुछ बातें करनी हैं।

पण्डितजी उठ कर विलासराय के साथ गये; एकान्त में ले जाकर विलासराय ने कहा—पण्डितजी, आप अपने कपड़ों का माप लाये हों तो दीजिये, मैं कपड़े बनवा कर कलकत्ते से मँगा दूँ।

पण्डितजी हँस कर कहने लगे—सेठजी, मुझे अभी किसी कपड़े की ज़रूरत नहीं है। इसलिए क्षमा कीजिये।

विलासराय सकुचा कर कहने लगे—पण्डितजी, मैं क्या करूँ, सुन्दरमल ऐसी बुरी सङ्गति में पड़ा है कि कथा-पुराण

सुनना उसे अच्छा ही नहीं लगता। मैं तो उसे बहुत समझाता हूँ। मैं हृदय से उसकी भलाई चाहता हूँ, परन्तु उसके साथी ऐसे भयानक हैं कि अच्छी बातें उसके मन में घुसने ही नहीं देते। कल मैंने उससे कहा कि पण्डितजी से भागवत सुन लो सो पहले तो उसने मान लिया, परन्तु उसके साथियों ने उसे फिर बहका दिया। पर आप विश्वास रखिये कि कभी न कभी मैं आपको हज़ार-पाँच सौ का लाभ अवश्य करा दूँगा।—पण्डितजी हँस कर चुप हो गये।

विलासराय पण्डितजी को बिदा करके सुन्दरमल के पास आये और कहने लगे—देखा! कोरी कथा कहना जानते हैं, बातें तो ज्ञान की सुन लो परन्तु भीतर देखो तो बिल्कुल पोल। पण्डितजी भी बड़े रसिक हैं। एक स्त्री के नयनबाण से बिंधे हुए हैं। मैंने अभी पण्डितजी को पकड़ा तब क्षमा माँगने लगे। ऐसे दुराचारी पुरुषों को कभी घर के भीतर न जाने देना चाहिए।

मण्डली बोल उठी—आप बहुत ठीक कहते हैं। पण्डितजी का चाल-चलन बहुत ख़राब है।

पण्डितजी के ख़राब चालचलन के कई उदाहरण भी दे दिये गये। सुन्दरमल ने कहा—तब तो पण्डितजी बगला-भगत हैं—सब लोग हँस पड़े।

———

दसवाँ परिच्छेद

शाम को धायी आई और एकान्त में विलासराय से मिल कर कहने लगी—आज एक ठीक कर आई हूँ।

विलासराय ने उसकी ठुड्डी पकड़ कर कहा—मेरी प्यारी! किसे?

धायी ने कहा—बसन्तलाल की बहू ने आपको आठ बजे रात को बुलाया है।

विलासराय पुलकित होकर बार-बार धायी की पीठ ठोकने और प्यार से कहने लगे—तुम मेरी प्यारी! तुम मेरी प्यारी!! मैं आज रात को ज़रूर जाऊँगा। अगर उस वक्त बसन्तलाल मिल गया तो?

धायी बोली—आप कुछ फ़िक्र मत करें। बसन्तलाल उस वक्त किसी से मिलने जायगा।

विलासराय ने कहा—अच्छा, ठीक है।

❀ ❀ ❀ ❀ ❀

पाठक! आइए, एक बार बसन्तलाल के घर चलें।

बसन्तलाल की बहू का नाम कमला था। कमला पतिव्रता थी। स्त्री-पुरुष में बड़ा प्रेम था। कमला कुछ हँसोड़ थी। हँसी-मसख़री करना उसे अच्छा लगता था, परन्तु उसका आचरण बड़ा शुद्ध, देवी के जैसा था।

दोपहर को धायी कमला के पास गई थी। पहले तो इधर-उधर की बातें करके फिर बड़े ललित और मनोमोहक शब्दों में उसने अपने आने का उद्देश्य कहा। इसमें पहले तो कमला को बड़ा क्रोध हो आया; उसने चाहा कि धायी का मुँह पीटते-पीटते उसके दाँत तोड़ डालूँ, परन्तु उसके हँसमुख स्वभाव ने उसे ऐसा करने से रोका। कमला दिल्लगी से बहुत प्रसन्न रहती थी। इसलिए एक नया तमाशा देखने का मौक़ा उसने हाथ से जाने देना उचित न समझा। उसने धायी से सहमत होकर कहा कि आठ बजे भेज देना और यह भी बता दिया कि उस समय बसन्तलाल किसी से मिलने बाहर जायँगे।

धायी अपना मनोरथ सिद्ध समझ कर बड़ी ही प्रसन्न हुई। उसने जाते समय कहा—कमला! तेरे भाग जागे।

कमला खिलखिला कर हँस पड़ी। उसने मन में धायी की बात का उत्तर दिया—विलासराय के भाग जागे, कह।

धायी के जाने के बाद कमला का पति बसन्तलाल घर में आया। कमला दौड़ कर उससे लिपट गई, और कहने लगी—आज एक तमाशा करूँगी, आप आज्ञा दीजिये।

बसन्तलाल ने पूछा—क्या तमाशा करेगी?

कमला ने धायी की कुल कथा कह सुनाई। सब सुन कर पहले तो बसन्तलाल का मन बहुत खिन्न हुआ। परन्तु नया तमाशा करने का कमला का आग्रह देख कर वह भी राज़ी हो गया। बसन्तलाल को अपनी स्त्री के चाल-चलन पर स्वप्न

में भी सन्देह नहीं था। इसी से उसने नया तमाशा करने की अनुमति दे दी।

कमला ने कहा—आठ बजे आप घर से बाहर चले जाना और कहीं आसपास छिप कर बैठ रहना। जब विलासराय भीतर चला आवे तब आकर दरवाज़ा खटखटाना।

बसन्तलाल ने पूछा—क्या तमाशा करेगी, कुछ मुझे भी तो बता दे।

कमला ने कहा—ना, अभी नहीं बताऊँगी। तमाशा हो जाने के बाद बताऊँगी।

बसन्तलाल ने हँस कर कहा—अच्छा, जैसी तेरी इच्छा हो, कर।

इधर विलासराय ने जब से धायी की बात सुनी तब से वे यही चाहने लगे कि कब आठ बजे। घड़ी की सुई को तो वे खींच कर आठ पर कर सकते थे परन्तु सूर्य को खींच कर पश्चिम में डुबाना उनकी शक्ति से बाहर की बात थी। इससे उनको बड़ा खेद हुआ! वे सोचने लगे—सूर्य घड़ी के अधीन क्यों न हुआ। ईश्वर ने बड़ी भूल की है।

ख़ैर, किसी न किसी तरह आह-ऊह करते-कराते आठ बजे। विलासराय झट से अतर-फुलेल लगा कर अच्छे कपड़े पहन कर घर से बाहर निकले। रास्ते में लम्बा-लम्बा डग डालते हुए वे कमला के दरवाज़े पर जा डटे। परस्त्री को मा, बेटी और बहन के बराबर समझनेवाले, शास्त्रों को निचोड़नेवाले,

परोपकारी, ईश्वर-भक्त, और निर्लोभ की मूर्त्ति विलासराय ने कमला का दरवाज़ा खटखटाया। कमला को पहले तो इस करतूत पर लज्जा मालूम हुई, परन्तु उसके हँसमुख स्वभाव ने फिर उद्योग किया। कमला ने जाकर चुपचाप दरवाज़े की खिड़की खोल दी। जब विलासराय भीतर चले आये तब उसने खिड़की बन्द कर दी। घर में बिल्कुल अँधेरा था। क्योंकि कमला ने पहले ही से दीपक बुझा दिया था। विलासराय अन्धों की तरह उस अँधेरे में टटोलने लगे। वे इधर-उधर दोनों हाथ फैलाते और कहते जाते थे—"ऐ मेरी प्राणप्यारी! कहाँ है? मैं तेरे विरह में जल रहा हूँ, मुझे ठण्ढा कर। ऐ मेरे हृदय! तू आके मुझसे चिपक जा।" कमला उस अँधेरे में दूर खड़ी विलासराय की बातें सुन कर मुसकुरा रही थी। इतने में वसन्तलाल ने आकर ज़ञ्जीर खटखटाई और पुकारा—किवाड़ खोलो।

अब तो विलासराय का सब नशा जाता रहा। वे थर थर काँपने लगे। मुँह से बोली भी नहीं निकलती। सारा शरीर सुन्न हो गया। विलासराय के पास आकर कमला कहने लगी—अब तो बड़ी आफ़त आई। आपकी इज़्ज़त के साथ मेरा तो सर्वस्व नष्ट हो गया। मैं तो किसी योग्य न रही।

विलासराय ने धीरे से गिड़गिड़ा कर कहा—मेरी प्यारी, आज मुझे बचा लो। मैं तुम्हारा जन्म-भर उपकार मानूँगा।

कमला ने असमर्थता प्रकट करते हुए कहा—कैसे बचाऊँ? यहाँ छिपा रहने दूँ तो भी सबेरे तक छुटकारा नहीं मिल

सकता क्योंकि वे भीतर आते ही ज़ञ्जीर बन्द कर लेंगे। यदि आप, उनके भीतर आने के बाद, खिड़की खोल कर बाहर चले जायँ तो वे जब यह पूछेंगे कि "खिड़की किसने खोली" तब मैं क्या जवाब दूँगी? उनका मुझ पर सन्देह हो जायगा और मैं घर से निकाली जाऊँगी। (शोकित स्वर से) धायी राँड! तेरा सत्यानाश हो। तू ने मुझे बरबाद किया।

उधर बार-बार ज़ञ्जीर खटखटाई जाने लगी। वसन्तलाल बार-बार चिल्लाता था—किवाड़ खोल, अरी खोलती क्यों नहीं? जल्दी खोल, इत्यादि।

और कोई उपाय न देख कर विलासराय कमला के पैरों पर गिर पड़े और बोले—आज तो मुझे बचा लो।

कमला ने कहा—एक उपाय है। आप एक घाँघरा पहन कर और ओढ़नी ओढ़ कर एक कोने में बैठ जायँ, फिर मैं बात बना लूँगी। मैं घाँघरा और ओढ़नी दूँगी। उसे आप कल धायी के हाथ भेज दीजियेगा।

विलासराय ने कहा—अरे प्यारी, जल्दी ला।

कमला ने कहा—अब प्यारी-प्यारी कहोगे तो मैं नहीं लाऊँगी।

विलासराय ने कहा—तू मेरी मा है, मैं तेरा पुत्र हूँ। मेरा प्राण बचा।

कमला मुसकुरा कर घाँघरा-ओढ़नी ले आई। विलासराय उसे पहन करके एक कोने में बैठ गये। कमला ने झट खिड़की

खोल दी। बसन्तलाल ने कहा—कितनी देर से चिल्लाता हूँ, सुनती ही नहीं। क्यों ?

कमला ने कहा—क्षमा कीजिये। मैं कोठरी में बैठी थी, आपकी पुकार नहीं सुनी।

बसन्तलाल ने जब खिड़की बन्द करनी चाही, तब उसे रोक कर कमला ने कहा—ठहर जाइये। श्यामा की मा को जाने दीजिये। अकेली समझ कर मैंने इसे बातचीत करने के लिए बुला लिया था।

स्त्री के भेस में विलासराय खिड़की से बाहर निकले।

कमला ने बसन्तलाल के कान में कहा—आप इन्हें कुछ दूर पहुँचा आइये।

बसन्तलाल खिड़की से बाहर निकले। विलासराय चाहते थे कि घाँघरा और ओढ़नी उतार कर रास्ते में फेंक दें। परन्तु इधर-उधर ताकने से जब बसन्तलाल पीछे आता हुआ दिखाई दिया तब वे स्त्री-भेस परित्याग न कर सके। बसन्तलाल कुछ दूर तक विलासराय के साथ गया, और फिर लौट आया।

विलासराय ने सोचा कि रात का वक़्त तो हुई है, घर चल कर ही इस भेस को परित्याग करूँगा, क्योंकि रास्ते में कहीं कोई देख लेगा तो बड़ी हँसी होगी। किन्तु दूर ही से उन्होंने देखा कि उनके घर का दरवाज़ा तो बन्द है। नौकर को बुलावें तो आवाज़ से पहचाने जा सकेंगे। इसलिए उन्होंने सुन्दर-मल ही के घर जाना उचित समझा। क्योंकि उस घर का

दरवाज़ा खुला था और नौकर-चाकर दरवाज़े पर बैठे चिलम पी रहे थे।

पाठकों को याद होगा कि एक दिन विलासराय ने नौकरों को आज्ञा दी थी कि बिना जाँच किये किसी स्त्री को अन्दर मत जाने देना। संयोग की बात देखिये कि उनकी इस आज्ञा का उपयोग पहले-पहल उन्हीं पर किया गया। जब विलासराय स्त्री-वेष में दरवाज़े पर पहुँचे तब सबसे पहले माँगिया ने चिलम पीते-पीते कहा—कौन है रे? विलासराय कुछ न बोले।

माँगिया ने फिर कहा—कौन है? बिना नाम बताये हम भीतर नहीं जाने देंगे।

विलासराय चुप रहे।

गङ्गाराम ने कहा—देखो, बोलती नहीं है। गूँगी-बहरी है क्या?

माँगिया ने कहा—अरे तू बोलती क्यों नहीं?

विलासराय शङ्कित हृदय से त्रिशंकु की तरह दरवाज़े के बीच में खड़े थे। न इधर जाते थे, न उधर जाने पाते थे। तीन-चार पहरेदार वहाँ और बैठे थे। उनमें से एक उठा और विलासराय के पास आकर कहने लगा—तू कौन है? अपना नाम क्यों नहीं बताती?

विलासराय घूँघट काढ़े खड़े थे।

माँगिया ने क्रुद्ध होकर कहा—गङ्गाराम, लालटेन तो ला, देखूँ यह कौन है।

लालटेन आते ही माँगिया की दृष्टि एकाएक विलासराय

के पैरों पर पड़ो। पैरों में नया बूट था, परन्तु गहना एक भी नहीं। यह देख कर माँगिया ने समझा कि यह कोई चोर है और स्त्री का भेस धर कर भीतर चोरी करने के लिए घुसा जा रहा है। माँगिया ने हाथ की चिलम तो दूर फेंक दी, और दोनों हाथों से विलासराय की ओढ़नी "पाजी, बदमाश" आदि शब्द कह कर खींचली। ओढ़नी के भीतर से धर्म के तत्त्व को जाननेवाले प्रसिद्ध महात्मा विलासराय निकल आये। यह देख कर नौकरों से हँसी रोके न रुक सकी। सब नौकर सकुचा कर पीछे हट गये और विलासराय ख़ाली घाँघरा पहने भीतर चले गये। कमरे में जाकर उन्होंने घाँघरा खोला तब उनके जी में जी आया। घाँघरा और ओढ़नी उन्होंने कपड़े में बाँध कर सन्दूक़ के भीतर रख दी।

बसन्तलाल विलासराय के साथ कुछ दूर तक क्यों आया? इसका कारण यह था कि जिससे वे कहीं रास्ते ही में घाँघरा और ओढ़नी को न उतार डालें। कमला चाहती थी कि स्त्री-वेष ही में विलासराय अपने घर जायँ, तब आनन्द आवे।

कमला की दिल्लगी से बसन्तलाल बहुत प्रसन्न हुआ। वह हँसता हुआ घर पहुँचा तब कमला दिया जला कर उसी की राह देख रही थी। बसन्तलाल ने कमला का चिबुक पकड़ कर गाल पर धीरे से एक चपत जमाई और कहा—तुझे लोगों की हँसी उड़ाना बहुत पसन्द है।—दोनों बहुत देर तक हँसते रहे।

———

ग्यारहवाँ परिच्छेद

कमला और बसन्तलाल की अच्छी जोड़ी मिली थी। कमला की तरह बसन्तलाल भी हँसमुख और मसखरा था। सवेरा होते ही बसन्तलाल ने एक छन्द बनाया और अड़ोस-पड़ोस के दो-चार लड़कों को सिखा दिया। पहर दिन चढ़ते-चढ़ते बालक-मण्डली में वह छन्द स्तोत्र की तरह रटा जाने लगा। दोपहर को विलासराय कहीं जा रहे थे। उस समय लड़के एक गली में बसन्तलाल का बनाया हुआ यह छन्द गा रहे थे।—

ओढ़ ओढ़नी पहन घाँघरा बाबू बने लुगाई।
समझे गये चोर पर तौ भी तनक न लज्जा आई॥

लड़कों को तो मालूम नहीं था कि इसका अर्थ विलासराय पर लग रहा है, परन्तु विलासराय ने समझा कि यह सब माँगिया की दुष्टता है। अपने नौकरों के सिवा और कोई मेरे चरित्र को नहीं जानता। और, अपने नौकरों में भी माँगिया के सिवा किसी का साहस नहीं है कि हमारे विरुद्ध कुछ कह सके। माँगिया का ही मिज़ाज बिगड़ा है। उसको कुछ घमण्ड है। आज चल कर उसका गर्व चूर्ण करूँगा।

विलासराय जब घर वापस आये तब आते ही उन्होंने माँगिया को बुलाया। वह आकर उनके पास खड़ा हुआ।

विलासराय कुछ देर तक चुपचाप उसकी ओर देखते रहे और फिर बोले—माँगिया! मैं देखता हूँ कि तेरा मिज़ाज आकाश पर चढ़ गया है। मैं उसे आकाश से खींच कर धरती पर पटक दूँगा और पैरों से रगड़ कर चूर-चूर कर डालूँगा।

माँगिया अकचका कर बोला—ऐं! सेठ साहब, आप क्या कहते हैं? मेरे कौन-सा मिज़ाज है जिससे आप क्रुद्ध हुए?

विलासराय ने क्रोधित स्वर में कहा—क्यों रे, कल रात की बात तूने जाकर लड़कों से कह दी, और उन्हें छन्द बना कर सिखा दिया। जब लड़कों तक को यह बात मालूम हो गई तब बड़ों से तो तुमने सबसे पहले कहा होगा। अब गली-गली मेरी निन्दा हो रही है। तेरी जगह दूसरा कोई होता तो मैं जूतों से उसकी ख़बर लेता।

माँगिया को भी अब कुछ क्रोध चढ़ आया। उसने कहा—मैंने यह बात अपने मुँह से निकाली ही नहीं, आपका मुझ पर झूठा सन्देह है।

विलासराय और क्रोधित हुए; और कहने लगे—बस, बस, मुझे धोखा देने की कोशिश मत कर; छोटे नौकर के पेट में बड़ी बात नहीं पचती। मूर्ख मालिक साधारण नौकरों को घराऊ बातों में स्वतन्त्र अधिकार दे देते हैं, इसी से उनके अभि-मान की सीमा नहीं रहती, और वे किसी के मान-अपमान का विचार नहीं रखते। अच्छा, जा तू।

माँगिया ने मन में कहा कि ये हमारा क्या कर सकते

हैं ? मैंने इनके साथ इतना उपकार किया और अब ये उसका बदला इस तरह चुका रहे हैं। अब मैं इनके सन्देह को सच करके दिखाऊँगा। जैसे इनका हाथ पकड़ कर ऊपर चढ़ाया है वैसे ही अब नीचे ढकेलूँगा।

विलासराय ने मन में कहा कि यह जब अपने असली मालिक मङ्गलचन्द सुन्दरमल का न हुआ, और उनके उपकारों के बदले में अब उनके घर में फूट डाल कर सत्यानाश कर रहा है तब यह सम्भव नहीं कि मेरे साथ इसका व्यवहार सदा सच्चा बना रहे। इसका विश्वास करना सरासर भूल है।

माँगिया अपना अपमान न सह सका। और सचमुच इस काम में उसका कुछ दोष भी नहीं था। परन्तु दुष्ट आदमी को बिना कारण भी कलङ्क लग जाया करता है। माँगिया के हृदय में अब विलासराय से बदला लेने की अग्नि प्रज्वलित हुई। वह खुल्लम-खुल्ला तो विलासराय से विरोध कर नहीं सकता था, क्योंकि विलासराय उसे दम भर में नौकरी से अलग कर सकते थे। और, यदि पुराने नौकर का पक्ष लेकर मोहिनी कुछ कहती तो उसकी चलती भी नहीं। क्योंकि सुन्दरमल विलासराय ही के हाथ का खिलौना था। अस्तु, माँगिया काम-काज से फुरसत पाकर पण्डित देवदत्त के घर गया। पण्डितजी ने पूछा—क्यों माँगिया, क्यों आया है?—माँगिया पास जाकर बैठ गया, और कहने लगा—पण्डितजी, मैं आपके पास एक बात कहने आया हूँ। आप सेठ मङ्गलचन्दजी के घर के

पुरोहित हैं। ब्राह्मण हैं, देवता हैं। मैं आपका दास हूँ। आपकी निन्दा मुझसे सुनी नहीं जाती।

पण्डितजी ने हँस कर पूछा—मेरी निन्दा कैसी ?

माँगिया ने कहा—"अब मैं आपसे सच-सच कह देता हूँ। मेरे मुँह से कुछ अनुचित बात निकल जाय तो क्षमा कीजियेगा। बात यह है कि विलासरायजी अब आपके विरुद्ध हो गये हैं। सुन्दरमल को तो उन्होंने आपके विरुद्ध भड़का ही दिया है और अब सेठानी को भी बहका रहे हैं। घर में आपका जितना आदर-सत्कार है उतना वे अब नहीं रहने देंगे। वे आपके चालचलन पर बड़ा धब्बा लगाते हैं और कहते हैं कि पण्डितजी किसी स्त्री से—

"बस, पण्डितजी ! अब आगे मेरे मुँह से बात नहीं निकलती।"

पण्डितजी खिलखिला कर हँस पड़े और कहने लगे—भैया ! मैंने चाणक्यनीति पढ़ी है। मैं सब बातें समझता हूँ। मुझे किसी का कुछ भय नहीं है। मेरे आचरण पर कोई कुछ कलङ्क लगावे तो लगाने दो, मुझे उससे भी कुछ भय नहीं। साँच को आँच नहीं। हाँ, यह बात अवश्य कहूँगा कि दुष्टों का स्वभाव ही ऐसा होता है कि वे गुण को न ग्रहण कर के दोष ही ढूँढ़ा करते हैं। बगुला मानसरोवर में भी मछली की ही खोज करता है। शूकर नन्दन वन में भी मल की ही इच्छा करता है। यदि मुझमें कुछ दोष होगा तो निन्दा सुन कर मैं उसके दूर करने का प्रयत्न करूँगा; यदि कुछ भी दोष नहीं होगा, और झूठी

निन्दा होगी तो मेरा सदाचार दृढ़ होगा। इसलिए मुझे निन्दा से डर नहीं।

माँगिया ने समझा था कि मेरी बातों से पण्डितजी को क्रोध चढ़ आवेगा। परन्तु जब उसने पण्डितजी के चेहरे पर पहले जैसी प्रसन्नता के सिवा कुछ भी विषाद की झलक न देखी तब वह सुस्त होकर कहने लगा—हाँ, पण्डितजी! आप विद्यावान् हैं, आपका स्वभाव कोमल है; भली-बुरी सब बातें सुन कर आप सहन कर सकते हैं; परन्तु मैं मूर्ख आदमी हूँ। स्वभाव के विरुद्ध थोड़ा भी कारण उपस्थित होने पर झट क्रोध आ जाता है। मैंने दूसरों की कही हुई अनुचित बात अपने मुँह से निकाल कर बड़ा अपराध किया है। आप कृपा कर के उसे क्षमा कीजिये।

पण्डितजी फिर ज़ोर से हँसने लगे। कुछ देर और ठहर कर माँगिया पण्डितजी को प्रणाम करके चला आया।

इधर विलासराय का क्रोध शान्त होने पर उन्होंने माँगिया को अप्रसन्न कर देने में अपनी बड़ी भूल समझी। वे डरने लगे कि कहीं यह मोहिनी को मेरे विरुद्ध न कर दे। यद्यपि सुन्दर-मल उन्हीं के वश में था परन्तु मोहिनी को भी प्रसन्न रखना वे ज़रूरी समझते थे।

माँगिया पण्डितजी के पास से लौट आया। उसे देख कर विलासराय हँस कर कहने लगे—माँगिया, कहाँ गया था? मैं तो तुझे बहुत देर से ढूँढ़ता था।

माँगिया ने कहा—मैं अपने एक काम से बाज़ार गया था, कहिये क्या काम है ?

विलासराय फिर हँस कर कहने लगे—आज तेरा मुँह उदास क्यों है ? मेरी बातों से तेरे दिल पर कुछ चोट पहुँची है। (हँसकर) जा मूर्ख, ऐसी बातों को पेट में नहीं रखना चाहिए। मेरा तो स्वभाव तू जानता ही है कि क्रोधी है। क्षण भर क्रोध रहता है और फिर क्षण भर में शान्त भी हो जाता है। मेरी बातों से तू कभी अप्रसन्न न हुआ कर। जा, दर्ज़ी से अपने कपड़े की माप करा ला। मैं अपने लिए कलकत्ते से कुछ कपड़े बनवा कर मँगाऊँगा, सो तेरे लिए भी दो-एक अच्छे कपड़े बनवा कर साथ ही मँगा लूँगा।

विलासराय के पास यही एक हथियार था। जिसको वे अपने पर प्रसन्न करना चाहते थे उसको कपड़े बनवा देने की प्रतिज्ञा करते थे। रुपये देने की बात कहें तो नक़द देना पड़े। इसलिए कलकत्ते से कपड़े बनवा कर मँगवा देने की बात कहते थे, क्योंकि इसमें कम से कम बीस-पचीस दिन तो लग ही जायँगे। तब तक उसे भरोसा देकर वे अपना कार्य सिद्ध कर लेते थे। काम निकल जाने पर कपड़े देने की कौन कहे, मुँह से बोलते तक नहीं थे। कपड़ों का बहाना तो लोगों को ललचाने के लिए था।

विलासराय की चिकनी-चुपड़ी बातों से माँगिया का क्रोध ठण्ढा हो गया।—"मृदङ्गो मुखलेपेन करोति मधुरध्वनिम्।"

मृदङ्ग भी लेप लगाने से मीठा शब्द करने लगता है, तब माँगिया का तो कहना ही क्या था।

मनुष्य का हृदय एक अद्भुत पदार्थ है। यदि मनुष्य को अपने हृदय का ज्ञान हो तो दूसरों के हृदय की बातें समझना कुछ कठिन नहीं है।

माँगिया यद्यपि विलासराय की बातों से प्रसन्न हो गया परन्तु उसके हृदय से यह भाव नहीं हट सका कि अवसर मिलते ही विलासराय उसे निकाल बाहर करेंगे और साथ ही कुछ कलङ्क भी चिपका देंगे। विलासराय के हृदय में भी यही भाव उत्पन्न हुआ था। अतएव उन दोनों की स्वाभाविक मित्रता नष्ट हो गई। जहाँ स्वार्थ है वहाँ मित्रता कैसी? दोनों के हृदय में सन्देह उत्पन्न हो गया। सन्देह ही द्वेष का कारण है।

बारहवाँ परिच्छेद

उपरोक्त घटना के कई महीने पीछे हम पाठकों का ध्यान लक्ष्मी की ओर आकर्षित करते हैं।

लक्ष्मी का शरीर बहुत कमज़ोर हो गया। यद्यपि सुन्दरमल से उसका साक्षात् उस दिन से फिर कभी नहीं हुआ जबसे सुन्दरमल ने उस पर लाञ्छन लगाया था परन्तु वह अहर्निश सुन्दरमल के कल्याण के लिए ईश्वर से प्रार्थना किया करती थी।

मोहिनी की ख़ुशामदी स्त्रियाँ व्यङ्ग बोला करती थीं, और लक्ष्मी चुपचाप सहन कर लिया करती थी। यद्यपि उसका शरीर सूख कर केवल अस्थि-चर्म मात्र रह गया था, परन्तु उसके मुख पर तेज विराजमान था। वह सच्ची सती और पतिव्रता थी।

मनुष्य का हृदय किसी न किसी का आधार ज़रूर ढूँढ़ता है। एक पर से हटा तो दूसरे पर जा लगा। उस पर से भी हटा तो तीसरे पर आ गया। मतलब यह कि हृदय कभी बेकार नहीं रहता। उसे सहारे की अपेक्षा रहती है। मोहिनी के हाथ से सुन्दरमल जाता रहा। विलासराय पहले मोहिनी से डरते थे, अब मोहिनी ही विलासराय से डरने लगी। इसलिए मोहिनी का चित्त विलासराय से फिर पूर्ववत् घृणा करने लगा। परन्तु पहले तो कुछ बल था, सुन्दरमल कहे में था; अब तो वह स्वतन्त्र हो गया। मोहिनी सुन्दरमल के साथ कुछ कड़ाई करे तो वह मोहिनी को फटकार देगा। इसलिए मोहिनी के हृदय का पहला आधार जाता रहा। अब वह दूसरा आधार ढूँढ़ने लगी। मोहिनी के पास जो ख़ुशामदी स्त्रियाँ आती थीं उन पर हृदय टिक नहीं सकता था क्योंकि वे इस योग्य न थीं। इस-लिए हृदय अपनी स्वाभाविक गति से लक्ष्मी पर जा अड़ा। मोहिनी सोचने लगी--विलासराय दुष्ट है, धायी विलासराय की दूती है, शायद इन दोनों ने किसी स्वार्थ से ही हमारी सती साध्वी लक्ष्मी पर कलङ्क लगाया हो। यह सोचते ही उसको देवशङ्कर की बातें याद आईं। देवशङ्कर ने कहा था कि वह पत्र

या तो हमारा लिखा हुआ नहीं होगा, या उसमें कुछ घटाया-बढ़ाया गया होगा। मोहिनी के पास वह पत्र मौजूद था। उसने अलमारी खोल कर पत्र निकाला। सचमुच पत्र में प्यारी के आगे "बहन" और प्यारा के आगे "भाई" शब्द रबर से मिटाया गया था। अब मोहिनी की आँखें खुलीं। उसे एक बात और याद आई। धायी ने जिस दिन पत्र दिया था उस दिन पत्र देख कर लक्ष्मी ने भी यही कहा था कि इसमें दो शब्द रबर से मिटाये हुए हैं। उस दिन क्रोध के वश में मैंने उसकी बात पर कुछ ध्यान न दिया।

यह सोचते ही मोहिनी के हृदय में लक्ष्मी के लिए दया और अपने किये पर पश्चात्ताप उत्पन्न हुआ।

दोपहर का समय था। मोहिनी धीरे-धीरे लक्ष्मी के कमरे के पास गई। किवाड़ बन्द थे। खिड़की थोड़ी-थोड़ी खुली थी। उसी छेद की राह से मोहिनी ने देखा कि लक्ष्मी चौकी पर बैठी गीता का पाठ कर रही है। उसकी शुद्ध और दुर्बल परन्तु तेजोपूर्ण मूर्त्ति देख कर मोहिनी का हृदय भर आया। मोहिनी ने भरे हुए कण्ठ से पुकारा—"बहू"—और दरवाज़े के पास आकर हाथ से दरवाज़ा खोल दिया।

लक्ष्मी ने दरवाज़े की ओर देखा तो मोहिनी खड़ी है। वह गीता की पुस्तक बन्द करके झट उठी और मोहिनी के चरणों पर माथा रख दिया। मोहिनी ने लक्ष्मी को उठा कर हृदय से लगा लिया। उस समय दोनों के हृदय विषाद-पूर्ण थे। दोनों

एक-दूसरी से लिपटी हुई कई क्षण तक रोती रहीं। जब वे अलग हुई तब भी उनकी आँखें आँसुओं की धारा बहा रही थीं। दोनों के मुँह से बात न निकलती थी। हृदय को बहुत थाम कर मोहिनी ने हाथ जोड़ कर लक्ष्मी से कहा—"देवी, मैंने तुम्हें बहुत कष्ट दिया। क्षमा करो।" मोहिनी स्वयं इससे अधिक न कह सकी, और लक्ष्मी के हृदय में इतना उद्वेग हुआ कि वह मोहिनी के चरणों पर गिर पड़ी और मूर्च्छित हो गई।

इस घटना को यहीं छोड़ कर हम पाठकों को आगे का वृत्तान्त सुनाते हैं।

उपरोक्त घटना के पश्चात् मोहिनी लक्ष्मी का बड़ा प्यार करने लगी। लक्ष्मी का रूखा-सूखा शरीर देख कर वह बार-बार रोती और अपनी करनी पर पश्चात्ताप करती थी। एक दिन मोहिनी ने सुन्दरमल को बुला कर कहा—बेटा! तू घर में सोया कर और अच्छी संगति कर। मैं तो समझती थी कि तू अब सुधर गया होगा, पर मुझे तो पहले से भी अधिक कुसंगति में फँसा दिखाई पड़ता है।

मोहिनी और लक्ष्मी का विरोध मिट जाने का समाचार पाकर विलासराय बहुत भयभीत हुए। उन्होंने सुन्दरमल को बहकाया कि तुम्हारी मा कुलटा लक्ष्मी को फिर चाहने लगी। तुम अपनी मा का कहना मत मानना। अस्तु, इसी उपदेश के वशीभूत होकर सुन्दरमल ने मुँह टेढ़ा करके मोहिनी को उत्तर दिया—बस-बस, रहने दो। मैं तुम्हारी एक बात भी

नहीं मानूँगा। तुम बैठी-बैठी खाया करो। इन बातों में पड़ने की तुम्हें क्या ज़रूरत है।

यह कह कर सुन्दरमल बाहर चला गया। मोहिनी के हृदय पर इन बातों का बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। वह उसी दिन से बीमार हो गई। चिन्ता की बीमारी बहुत भयानक होती है। जैसे मोहिनी को बहुत सी ख़ुशामदी स्त्रियाँ घेरे रहती थीं उसी प्रकार चिन्ता की भी बहुत सी बीमारियाँ सहचरी हैं। चिन्ता के साथ-साथ बहुत सी बीमारियाँ लग जाती हैं।

मोहिनी को ज्वर आने लगा। अन्न कम रुचने लगा। खाँसी आने लगी और शरीर में पीड़ा होने लगी। इन सब रोगों से भी भयानक मानसिक पीड़ा थी।

लक्ष्मी रात-दिन मोहिनी के पास बैठी रहती थी। मोहिनी को खाँसी आती और वह कफ थूक देती तो लक्ष्मी उसे उठने नहीं देती और उसका थूक हाथ पर ले लेती थी। लक्ष्मी एक क्षण भी मोहिनी के पास से नहीं हटती थी। मोहिनी कहती कि बहू, जाकर भोजन कर लो, मेरे साथ तुम अपना शरीर क्यों बिगाड़ती हो।—लक्ष्मी कहती कि तुम मेरी चिन्ता न करो। मैं खा-पी लूँगी।

एक दिन मोहिनी ने कहा—बहू! मैं इस बीमारी से बचूँगी नहीं, मर जाऊँगी।

आँखों में आँसू भर कर लक्ष्मी कहने लगी—मेरी क्या

दशा होगी। सब तरह का दुःख सिर पर उठा कर भी मैं तुम्हारे ही भरोसे निश्चिन्त थी। मैं कैसे जीऊँगी।

मोहिनी ने रुँधे कण्ठ से कहा—बहू, मैं मर जाऊँ तो सुन्दरमल को किसी न किसी तरह राह पर लाना।

इस बात से दोनों का हृदय भर आया और दोनों बहुत देर तक आँसू बहा कर हृदय को शान्त करती रहीं।

लक्ष्मी की रात-दिन की सेवा से मोहिनी की दशा कुछ सुधरने लगी। उसका ज्वर भी कम हो गया। खाने की कुछ रुचि भी होने लगी और खाँसी भी कम पड़ गई।

एक दिन दोपहर को मोहिनी सो गई। अतएव लक्ष्मी उठ कर अपने कमरे में चली आई और एक पुस्तक से मन बहलाने लगी।

गर्मी के दिन थे। नौकर-चाकर भी अपने-अपने काम से फ़ुरसत पाकर सो गये थे। नौकरनी मोहिनीवाले कमरे में फ़र्श पर सो रही थी। घर में सिवा लक्ष्मी के और कोई मनुष्य जागता नहीं था। लक्ष्मी पुस्तक बाँचने में ऐसी लवलीन थी कि उसे इस बात का पता ही न चला कि दरवाज़े पर कोई खड़ा है। दरवाज़े पर विलासराय खड़े-खड़े लक्ष्मी की ओर एक-टक देख रहे थे। उन्होंने धीरे से किवाड़ हटाया और भीतर प्रवेश किया; फिर झटपट किवाड़ बन्द कर लिया। उनको देख कर लक्ष्मी भय से उठ खड़ी हुई। विलासराय उसकी ओर देख कर कहने लगे—अहा, कैसा चाँद सा मुखड़ा है।

प्यारी लक्ष्मी, जबसे मैंने तुमको देखा है तबसे मेरा चित्त ठिकाने नहीं है। आ, मेरा हृदय शीतल तो कर।

यह कह कर विलासराय ने लक्ष्मी की ओर हाथ फैलाया। लक्ष्मी कई पग पीछे हट गई और थर-थर काँपने लगी। उसने हाथ जोड़ कर कहा—आप मेरे पिता तुल्य हैं, मैं आपकी पुत्री हूँ। मुझ पर दया कीजिये।

विलासराय कामोन्मत्त हो रहे थे। वे थोड़ा आगे बढ़ कर कहने लगे—प्यारी, मैं तेरा पिता नहीं हूँ, तुम मेरी पुत्री भी नहीं हो; मैं तो तुम्हारा प्रेमी हूँ, तुम्हारा दास हूँ। तुम मेरे हृदय की देवी हो। आओ, मैं तुम्हें हृदय से लगा कर पूजा करूँगा।

विलासराय की कुप्रवृत्ति देख कर लक्ष्मी के हृदय में उसके सतीत्व ने साहस भर दिया। वह क्रोध करके कहने लगी—अब बस करो, और चले जाओ, नहीं तो मैं हल्ला मचा कर लोगों को जगा दूँगी।

विलासराय कहने लगे—इससे क्या होगा? तुम्हारी ही इज़्ज़त तो जायगी। और, तुम्हें चिल्लाने ही कौन देगा! मुँह खोलते ही गला दबा कर मार डालूँगा।

यह कह कर विलासराय थोड़ा आगे बढ़ गये। अब उन्होंने लक्ष्मी को पकड़ना चाहा। किन्तु वह कमरे के दूसरे कोने में चली गई और क्रोध-पूर्वक कहने लगी—पापी, चाण्डाल! मेरी देह में हाथ मत लगा।

अब विलासराय को भी क्रोध चढ़ आया। वे कहने लगे—

"देखूँ, अब तुमको कौन बचाता है ! सीधे-सीधे कहता हूँ कि मेरी बात मान जाओ, मैं तुम्हें मालकिन के समान मानूँगा; सब काम तुम्हारे आज्ञानुसार करूँगा, परन्तु तुम सुनती ही नहीं। लो, देखता हूँ तुम अपने को कैसे बचा सकती हो।" यह कह कर विलासराय लक्ष्मी को पकड़ने चले। लक्ष्मी पिंजड़े में सिंह के सामने पड़ी हिरनी के समान कभी इस कोने में भागती, कभी उस कोने में।

विलासराय ठहर गये और कहने लगे--प्यारी, मेरी बात मान जाओ, मैं अपना सर्वस्व तुमको समर्पण कर दूँगा।

लक्ष्मी घुटने टेक कर बैठ गई और आँखों में आँसू भर कर, हाथ जोड़ कर कहने लगी—हे पिता ! मेरे धर्म की रक्षा करो, मैं निस्सहाय अबला हूँ, मुझ पर अत्याचार करना आपको उचित नहीं। हे ईश्वर ! मेरी रक्षा करो।

विलासराय जैसे कुछ सुनते ही न थे। क्योंकि "कामातुराणां न भयं न लज्जा।"

वे उन्मत्त की तरह फिर लक्ष्मी को पकड़ने के लिए बढ़े। अब लक्ष्मी उठ कर दूर हट गई और क्रोध से विकराल आँखें करके कहने लगी—पापी, नराधम, तुझे लाज नहीं आती। दूर हो यहाँ से।

परन्तु विलासराय बढ़ते ही गये। उन्होंने एक कोने में लक्ष्मी को घेर लिया। इससे उसके प्राण सङ्कट में पड़े। वह थर-थर काँप रही थी। उसके शरीर से पसीना निकल रहा था।

विलासराय उसे पकड़ना ही चाहते थे कि इतने में खिड़की में से आवाज़ आई—"चाण्डाल, राक्षस, यह क्या कर रहा है? गङ्गाराम, माँगिया, पकड़ो इस पापी को।" विलासराय ने घूम कर देखा तो मोहिनी पर दृष्टि पड़ी। मोहिनी को देखते ही वे किवाड़ खोल कर झट भाग गये। मोहिनी भीतर घुसी तो उसने लक्ष्मी को धरती पर मूर्च्छित पड़े पाया। मोहिनी भी एक तो शारीरिक निर्बलता से दूसरे मानसिक वेदना से मूर्च्छित होकर गिर पड़ी।

पाठकों को आश्चर्य होगा कि मोहिनी वहाँ कैसे पहुँच गई। बात यह थी कि जब विलासराय लक्ष्मी को विवश कर रहे थे उसी समय मोहिनी की निद्रा भङ्ग हो गई थी। फिर कई बार उसने लक्ष्मी की बोली सुनी तब वह कुछ गड़बड़ समझ कर लक्ष्मी के कमरे के पास चली आई, और वहाँ उसने वही उपरोक्त काण्ड देखा।

मोहिनी के पहले लक्ष्मी की मूर्च्छा दूर हुई। वह उठ बैठी और स्वप्न के समान कुछ समय पहले की दुर्घटना याद करके काँपने लगी। फिर उसने मोहिनी को भी पास ही मूर्च्छित अवस्था में पड़े पाया। मोहिनी को देख कर सब बातें उसे एक-एक करके याद आने लगीं, परन्तु यह समझ में न आया कि वहाँ मोहिनी कैसे आ गई। क्योंकि जिस समय मोहिनी ने विलासराय को फटकारा था उस समय लक्ष्मी मूर्च्छित अवस्था में खड़ी थी। उसे अपने तन-मन की सुध नहीं थी। अस्तु, डरते-

डरते लक्ष्मी बाहर आई क्योंकि उसे अभी तक भय था कि कहीं विलासराय इधर-उधर छिपे न हों। कमरे से बाहर निकल कर वह मोहिनी के कमरे में गई, और नौकरनी को जगा लाई। फिर दोनों ने मिल कर मोहिनी को उठाया और उसे उसके कमरे में ले जाकर पलँग पर लिटा दिया। मुँह पर पानी के छींटे देने से मोहिनी की मूर्च्छा जाती रही। मोहिनी अपने पास लक्ष्मी को बैठे देख कर अपना मुँह हाथ से ढक कर रोने लगी। मन का दुःख कुछ कम होने पर उसने कहा—बहू, अब मैं नहीं जीऊँगी। अब शीघ्र ही मेरे जीवन का अन्त होनेवाला है। विलासराय बड़ा नीच है। आज मैं पहुँच गई, नहीं तो वह तुम्हारा धर्म बिगाड़ चुका था। भगवान् ने तुम्हारी रक्षा की है। विलासराय हमारे कुटुम्ब का काल है। मैं मर जाऊँ तो तुम अपनी भी रक्षा करना और हो सके तो सुन्दर को सुधारने का प्रयत्न करना। देखना, कुल का नाम न डूबने पावे।

लक्ष्मी फूट-फूट कर रोने लगी। मोहिनी भी रोने लगी।

तेरहवाँ परिच्छेद

लक्ष्मी के कमरे से निकल कर विलासराय बाहर आये। उन्हें अपने कृत्य पर कुछ लज्जा नहीं थी। लज्जा को उन्होंने पहले ही तिलाञ्जलि दे डाली थी। उनको भय था तो केवल इस बात का कि मोहिनी सब बात प्रकट कर देगी और मुझे

निकाल देगी। उन्होंने सोचा कि हमारे मार्ग में केवल एक मोहिनी ही काँटा है, इसे हटा देने से हम निर्भय हो जायँगे। जब तक मोहिनी जीती है तब तक हमको रात-दिन भयभीत रहना पड़ता है। इस वक्त वह बीमार भी है, अतएव विष दे देने से किसी को सन्देह भी नहीं हो सकता।

अपनी इस समझ पर पुलकित होकर विलासराय ने माँगिया को पुकारा। माँगिया आ कर हाज़िर हुआ। उन्होंने उसे अलग ले जाकर अपनी निष्फलता का समाचार कहा। क्योंकि उस काम में माँगिया की भी सम्मति थी। विलासराय ने मोहिनी से भयभीत होने का कारण भी बता दिया और अन्त में उन्होंने भय मिटाने की युक्ति भी प्रकट कर दी। उनकी बातें सुन कर माँगिया काँप उठा। उसने कहा—यह काम बहुत भयानक है।

विलासराय ने कहा—तुम्हीं को करना होगा।

माँगिया ने सिर हिला कर कहा—ना, मुझसे यह काम नहीं होगा।

विलासराय ने कहा—इस काम के बदले में मैं तुमको बहुत धन दूँगा।

माँगिया ने कहा—कुछ भी हो, मुझसे यह काम नहीं होगा।

विलासराय ने कहा—तू अपने हाथ से न कर तो किसी दूसरे ही से करा दे।

माँगिया ने कहा—आप ही किसी दूसरे से करा लीजिये।

विलासराय ने कहा—तू हमारा कहना नहीं मानेगा तो मैं तेरे सब पापों को प्रकट कर दूँगा।

माँगिया ने निर्भय होकर कहा—मुझसे अधिक पाप आपने किया है।

माँगिया का उत्तर-प्रत्युत्तर सुन कर विलासराय दाँत पीसने लगे। उन्होंने कहा—अच्छा चल, कभी मैं तेरी भी ख़बर लूँगा। तेरा घमण्ड मैं मिट्टी में मिला दूँगा।

"अच्छा, तब देख लूँगा।" इतना कह कर माँगिया वहाँ से चला गया। विलासराय बहुत देर तक क्रोधित सर्प की तरह साँस लेते वहीं खड़े रहे। इतने में नौकरनी किसी काम से बाहर आई। विलासराय ने इशारे से उसे पास बुलाया और कमरे के अन्दर ले जाकर कहा—देख, तू बहुत ग़रीब है। मेरा एक काम कर दे तो मैं तुझे एक हज़ार रुपये दूँ।

एक हज़ार का नाम सुनते ही नौकरनी के मुँह में पानी भर आया। उसने कहा—आप जो काम करने को कहेंगे, मैं तुरन्त करूँगी।

विलासराय ने अपने सन्दूक़ में से एक पुड़िया निकाल कर नौकरनी के हाथ में दी और कहा—शाम को जब सुन्दर की मा दवा पीने लगे तब मौक़ा पाकर तू इस पुड़िया के भीतर के चूर्ण को उसमें मिला देना। जब तू मिला कर आवेगी उसी वक्त़ मैं तुझे हज़ार रुपया दे दूँगा।

नौकरनी समझ गई कि ये मोहिनी को विष दिलाना चाहते हैं। इसलिए एक बार तो उसका हृदय भी विचलित हो गया। उसने साफ़ "नाहीं" कर दी।

विलासराय ने कहा—तेरे भाग्य में हज़ार रुपये लेना लिखा नहीं है। इस समय यदि सुन्दर की मा मर भी जायगी तो लोग यही समझेंगे कि बीमारी से मरी है। तुझे बेखटके हज़ार रुपये मिल जायँगे। नौकरी छोड़ कर बेटा-बेटी के साथ ज़िन्दगी भर मौज उड़ाना।

अबकी बार नौकरनी का मन डिग गया। वह पुड़िया लेकर और अपने आँचल के कोने में बाँध कर भीतर चली गई।

विलासराय बहुत प्रसन्न हुए।

शाम के वक़्त मोहिनी पलँग पर लेटी हुई थी। कमरे के बाहर लोहे के चूल्हे पर उसके लिए काढ़ा (काथ) तैयार हो रहा था। मोहिनी के पेट में दर्द था। इससे वैद्य ने काढ़ा पिलाने की सम्मति दी थी। नौकरनी को चूल्हे के पास बैठा कर लक्ष्मी पानी लाने चली गई। यह अवसर देख कर नौकरनी ने आँचल से पुड़िया खोल कर उसमें डाल दी और कागज़ को चूल्हे के नीचेवाले छेद में डाल कर भस्म कर डाला।

आह! मोहिनी को क्या मालूम था कि आज वह विष का प्याला पियेगी। काढ़ा तैयार होने पर लक्ष्मी ने उसे छान कर, ठण्ढा करके, मोहिनी को दिया। मोहिनी ने पी लिया। वही

रात उसके लिए अन्तिम रात थी। काढ़ा पीकर वह ऐसी सोई कि फिर न उठी।

सवेरा हुआ। लक्ष्मी ने समझा कि मोहिनी को रात भर अच्छी नींद आई। मालूम होता है कि दवा ने अच्छा फ़ायदा किया। इसलिए वह बहुत प्रसन्न हुई। परन्तु जब बहुत देर तक मोहिनी न उठी, यहाँ तक कि हिली-डुली भी नहीं, तब लक्ष्मी को सन्देह हुआ। वह घबरा कर मोहिनी के पास गई। नाक पर हाथ रख कर देखा तो साँस बन्द! सारा शरीर ठण्ढा! लक्ष्मी चिल्ला उठी। उसका चिल्लाना सुन कर घर के और सब लोग दौड़ आये। नौकर-चाकरों के सिवा सुन्दरमल भी आया। सुन्दरमल ऐसा सपूत निकला कि मोहिनी की बीमारी के समय एक बार भी उसके पास नहीं आया था। सब रोने-पीटने लगे। लक्ष्मी को सबसे अधिक दुःख हुआ।

अस्तु, यथानियम मोहिनी का सब क्रिया-कर्म किया गया। सुन्दरमल ने शरमाते-शरमाते, लोगों के बहुत कहने-सुनने से, क्रिया-कर्म कराने का भार अपने ऊपर लिया। उसे भय था कि कहीं मेरे साथी लोग मेरी हँसी न उड़ावें। मारवाड़ में यह चाल है कि जिस दिन किसी की मृत्यु होती है उसी दिन उसके कुटुम्बी हजामत करा लेते हैं। सुन्दरमल के सिर पर बड़े-बड़े बाल थे। सुगन्धित तेल लगा कर वह उनको सँवारा करता था। उस दिन उनको भी कटवाना पड़ेगा, यह बात उसे बहुत बुरी लगी। परन्तु लाचार होकर कटवाना ही पड़ा।

क्रिया-कर्म समाप्त होने पर अब तो सिर्फ़ ब्राह्मणों को और बिरादरी के लोगों को भोजन कराना, ग़रीबों को दान देना और माता की यादगार के लिए कुछ धर्मार्थ सङ्कल्प करना आवश्यक था। इन कामों में कम से कम चालीस-पचास हज़ार रुपये की ज़रूरत थी। सेठ मङ्गलचन्द का घराना शहर भर में सबसे अधिक धनी और प्रतिष्ठित समझा जाता था, इसलिए प्रसिद्धि के अनुसार ख़र्च करना भी एक आवश्यक काम था। आय-व्यय और लेन-देन के कर्त्ता-धर्त्ता विलासराय [illegible] थे। इसलिए सुन्दरमल निश्चिन्त था कि विलासराय ने सब तरह का प्रबन्ध कर लिया होगा।

कई दिन के पश्चात्, एक दिन सन्ध्या को, सुन्दरमल ने अपने नौकरों से पूछा कि विलासरायजी कहाँ हैं। माँगिया ने कहा— जिस दिन से सेठानीजी मरीं उसी दिन से वे अपनी हवेली में रहने लगे।

सुन्दरमल विलासराय की हवेली में गया। उनको पुकारा।

विलासराय मसनद के सहारे बैठे थे। बोले—क्या है ?

सुन्दरमल पास बैठ कर कहने लगा—ब्राह्मणों और बिरादरी को भोजन कराना है। इसका क्या प्रबन्ध हो रहा है?

विलासराय ने रूखेपन से कहा—क्या भोजन कराओगे, पत्थर या रेत ?

सुन्दरमल, इस व्यङ्ग का अर्थ न समझ सका। वह

बोला—आप यह क्या कहते हैं? जो भोजन कराने का नियम है, वही कराया जायगा।

विलासराय ने कहा—ठीक है, कराओ।

सुन्दरमल ने कहा—मैं क्या कराऊँ। सब काम-काज तो आप सँभालते हैं। मुझे तो कुछ भी ख़बर नहीं कि क्या-क्या हो रहा है, क्या-क्या नहीं। मैं तो आपके भरोसे निश्चिन्त हूँ।

विलासराय भौं सिकोड़ कर कहने लगे—देखो, मैं साफ़-साफ़ बतला देता हूँ। कलकत्ते की दूकान में और यहाँ भी अब तुम्हारे पास एक पैसा नक़द नहीं है। व्यापार में घाटा लग कर सब जाता रहा। तुम्हारा दिवाला निकल रहा था, परन्तु बड़ों की इज्ज़त रखने के लिए मैंने अपने पास से कई हज़ार रुपये देकर बचाया है। यहाँ भी एक महीने से तुम्हारे घर में हमारा ही रुपया ख़र्च हो रहा है। जाकर मुनीम से पूछ लो। कई दिन पहले ही मैं तुमसे यह बात कहनेवाला था, परन्तु उसी दिन तुम्हारी मा का देहान्त हो गया। इससे चुप रह गया।

सुन्दरमल की बुद्धि अब कुछ ठीक हुई। बिना धक्का खाये आदमी को ज्ञान नहीं होता। सुन्दरमल हाथ जोड़ कर प्रार्थना करने लगा—इस समय आप मुझसे ऐसा न कहिये, मुझ पर अधिक दुःख का भार डालने का यह मौक़ा नहीं है। इस समय तो उठिये और सब काम-काज सँभालिये। मुझे बीच धार में न डुबाइये।

विलासराय कड़े होकर कहने लगे—तुम कैसे मूर्ख हो,

बात नहीं समझते! काम-काज ते। सँभाल लें, परन्तु रुपया कहाँ से आवेगा। तीस-चालीस हज़ार रुपया ते। मैं अपना तुम्हारे काम में लगा चुका; अब एक पाई भी तुम्हारे लिए ख़र्च करने की मेरी सामर्थ्य नहीं। जाओ, तुम्हारे ज़मीन और मकान बहुत से हैं उन्हें बेच कर काम चला लो।

सुन्दरमल फिर विनय-पूर्वक कहने लगा—इस समय मकान या ज़मीन बेचने से बड़ी हँसी होगी। हाँ, यह काम हो जाय ते। मकान या ज़मीन बेच कर, या जिस तरह हो सकेगा, मैं आपका पाई-पाई चुका दूँगा।

विलासराय ने रुष्ट होकर कहा—जाओ, अपना काम देखो। अधिक बकवाद न करो।

अब सुन्दरमल को भी क्रोध आ गया। वह कहने लगा—आपने हमारा सर्वनाश किया, हमारा धन लूट लिया और लुटा दिया। मेरा बाप इतना कमा कर रख गया था कि जीवन भर बैठ कर खाने से भी नहीं चुकता। मैंने आपके हाथ में अपना कारबार सौंप कर बड़ा धोखा खाया। आपने हमारे साथ बड़ा विश्वासघात किया।

अब ते। विलासराय के क्रोध की सीमा नहीं रही। उन्होंने एक थप्पड़ खींच कर सुन्दरमल के मुँह पर मारा और कहा—पाजी, बदमाश, मुँह से ऐसी बात निकालता है! मुँह सँभाल कर नहीं बोलता। जब तू गली-गली में बदमाशी करता फिरता था, और मैं तुझे समझाता था तब तेरी बुद्धि कहाँ गई थी?

मज़ा भी उड़ावेगा और धनी भी बना रहेगा ? तेरे लिए मैंने अपना कितना हर्ज किया, घर का रुपया ख़र्च कर तेरी इज़्ज़त बचाई, उसके बदले में तू मुझ पर यह दोष लगाता है। जा, यहाँ से चला जा। मेरे पास आने की अब कुछ ज़रूरत नहीं। मैं भी अपने रुपयों से सन्तोष करता हूँ।

सुन्दरमल चुपचाप वहाँ से उठ कर बाहर निकला और ग्लानि के मारे न जाने कहाँ अन्धकार में ग़ायब हो गया। नौकर-चाकरों ने बहुत ढूँढ़ा, परन्तु उसका पता न चला।

विलासराय और सुन्दरमल की बातें विलासराय के नौकर सुन रहे थे। जब सुन्दरमल उठ कर बाहर न जाने कहाँ चला गया तब उन नौकरों ने सब बातें सुन्दरमल के नौकरों से कह दीं। धीरे-धीरे ये बातें सारे शहर में फैल गईं। लोग मनमानी समालोचना करने लगे—

किसी ने कहा—ग्लानि के मारे सुन्दरमल कहीं कुएँ में डूब गया।

किसी ने कहा—वह साधू होकर भाग गया।

किसी ने कहा—जो अपना काम-काज स्वयं नहीं देखता, उसकी ऐसी ही दुर्दशा होती है।

किसी ने कहा—विलासराय ने इस समय धोखा देकर अच्छा नहीं किया।

कोई विलासराय का पक्षपाती बोल उठा—विलासराय का

इसमें कुछ दोष नहीं। वे सुन्दरमल के लिए बहुत-सा अपना रुपया लगा चुके हैं।

इसी प्रकार जितने मुँह उतनी बातें होने लगीं। लक्ष्मी को चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार सूझने लगा। चिन्ता के महासमुद्र में वह डूबने लगी। उसे कोई सहारा नहीं।

रात के दस बजे थे। विलासराय और सुन्दरमल की बातें धीरे-धीरे देवशङ्कर के पिता सेठ नारायणदास के कान तक पहुँचीं। सेठ नारायणदास और सेठ मङ्गलचन्द में बड़ी मित्रता थी, परन्तु इधर सुन्दरमल की नासमझी से उसके यहाँ उन्होंने आना-जाना छोड़ दिया था। वे बड़े दयालु, परोपकारी और सज्जन थे। थोड़े ही दिन पहले जब देवशङ्कर कलकत्ते गया था तब उसे काम-काज सँभला कर वे देश आये थे। लक्ष्मी के दुःख का समाचार उनको मिल चुका था। सुन्दरमल के एकायक ग़ायब हो जाने का समाचार सुन कर दूसरे दिन सवेरे वे लक्ष्मी से मिलने आये।

सेठ नारायणदास को देखते ही लक्ष्मी उनके पैरों पर गिर पड़ी और रोकर कहने लगी—पिताजी, मेरी लाज रक्खो।

सेठ नारायणदास की आँखें भी आँसुओं की धारा बहाने लगीं। उनका हृदय भर आया। उन्होंने कहा—बेटी, धीरज धरो, कुछ चिन्ता न करो; तुम्हारी लाज ईश्वर बचावेंगे।

लक्ष्मी उठ खड़ी हुई। सेठ नारायणदास ने पूछा—ब्रह्म-भोज के लिए क्या-क्या प्रबन्ध किया जा रहा है?

लक्ष्मी ने रोते-रोते कहा—कुछ नहीं।

सेठ नारायणदास ने कहा—"अच्छा, कुछ चिन्ता मत करो।" उन्होंने मुनीम को बुला कर पूछा—कल के लिए क्या-क्या प्रबन्ध किया गया है?

उसने कहा—कुछ नहीं।

सेठ नारायणदास ने पूछा—क्यों?

उसने कहा—हमारे पास दो सौ तिहत्तर रुपया साढ़े सात आने रोकड़ी हैं, और रुपया नहीं है। कलकत्ते की दूकान की हुण्डी कोई लेता नहीं, बिना रुपये के सामान कहाँ से आवे?

उसकी बातें सुन कर सेठ नारायणदास को बड़ा क्रोध आया। उन्होंने कहा—घर में कितना घी, चीनी और मैदा है।

मुनीम ने कहा—बिलकुल नहीं।

सेठ नारायणदास ने क्रुद्ध होकर कहा—अच्छा जाओ।

मुनीम चला गया। उन्होंने शोभाराम को बुलाया। सुन्दरमल के यहाँ से हटने के बाद वह सेठ नारायणदास के यहाँ मुनीम बन कर रहने लगा था। सेठजी ने कहा—ब्राह्मण-भोजन के लिए जितनी चीज़ों की ज़रूरत हो, आज से तैयार कराओ।

शोभाराम ने कहा—बहुत अच्छा।

सेठ नारायणदास की प्रतिष्ठा शहर में कम नहीं थी। बात की बात में सैकड़ों आदमी काम पर लग गये। कढ़ाइयाँ चढ़ गईं। अड़ोसी-पड़ोसी मशीन की तरह काम करने लगे।

तीन-चार दिन में सब भोजन के पदार्थ बन कर तैयार हो गये; और दो-तीन दिन में ब्राह्मणों को भोजन कराके, बिरादरी को जिमा कर तथा ग़रीबों को अन्न और धन बाँट कर छुट्टी मिल गई। इस काम में सेठ नारायणदास के चालीस-पचास हज़ार रुपये ख़र्च हुए, परन्तु उन्होंने सेठ मङ्गलचन्द से अपनी मित्रता का ख़याल करके कुछ परवा न की।

तीसरे दिन एक आदमी ने आकर कहा—मैंने सुन्दरमल को रेल के स्टेशन पर साधू के भेस में देखा है। उसे यहाँ वापस लाने का मैंने बहुत हठ किया, परन्तु वह वापस नहीं आया, और रेल पर दिल्ली की ओर गया है।

———

चौदहवाँ परिच्छेद

लक्ष्मी को सुन्दरमल की चिन्ता रात-दिन लगी रहती थी। जिस दिन से वह ग़ायब हुआ उसी दिन से लक्ष्मी ने खाना-पीना छोड़ दिया। उसका शरीर सूख कर बहुत ही दुर्बल हो गया। उड़ते-उड़ते यह ख़बर लक्ष्मी के कान में भी जा पड़ी कि सुन्दरमल साधू हो गया। जिस दिन उसको यह ख़बर मिली उसी दिन शाम को उसने सेठ नारायणदास को बुलवाया।

सेठ नारायणदास के आने पर उसने अपने और मोहिनी के कुल गहने लाकर उनके सामने रख दिये और कहा—इस घर का प्रबन्ध अभी बहुत गड़बड़ है। नौकरों पर मेरा पूरा

विश्वास नहीं है, इसलिए ये गहने आप अपने यहाँ रख लें। ज़रूरत होगी तब मैं फिर मँगा लूँगी।

सेठ नारायणदास ने उसकी बात मान ली और कुल गहने गिन कर अपने यहाँ रख लिये। ये गहने चालीस-पचास हज़ार से कम मूल्य के नहीं थे।

उसी रात को लक्ष्मी भी उस घर से न जाने कहाँ चली गई।

पाठक, अब देवशङ्कर के पास कलकत्ते चलिये।

एक दिन देवशङ्कर भोजन करके अपनी बैठक में बैठा था कि पोस्टमैन ने एक चिट्ठी लाकर उसको दी। लिफ़ाफ़े पर के अक्षर कुछ पहचाने से जान कर उसने बड़ी उत्कण्ठा से उस पत्र को खोला। पत्र में यह लिखा था—

"भैया देवशङ्कर,

तुम्हारी बहन अभागिनी लक्ष्मी यहाँ सूतापट्टी की धर्मशाला में ठहरी है। एक बार आकर मिल जाओ।

लक्ष्मी।"

पत्र पढ़ कर देवशङ्कर झटपट उठा और नौकर को गाड़ी लाने का हुक्म देकर कपड़े पहनने लगा।

बिना विलम्ब किये ही वह गाड़ी पर बैठ कर उपरोक्त धर्मशाला में जा पहुँचा। वहाँ अभागिनी लक्ष्मी एक कमरे में सिर नीचा किये हुए बैठी सुन्दरमल को स्मरण करके रो रही थी। देवशङ्कर को देखते ही वह फूट-फूट कर रोने लगी।

उसकी दशा देख कर देवशङ्कर भी रोने लगा। जब रोने से दोनों के हृदय का दुःख कुछ कम हुआ तब लक्ष्मी ने देवशङ्कर को अपने घर की दुर्दशा का और विलासराय की दुष्टता का, आदि से अन्त तक, सारा वृत्तान्त कह सुनाया। लक्ष्मी की बातों से देवशङ्कर बहुत उदास हुआ, परन्तु उसने लक्ष्मी को धीरज देना ही उचित समझा और कहा—बहन, तुम कुछ चिन्ता न करो; ईश्वर पर भरोसा रक्खो।

लक्ष्मी ने कहा—भैया, तुम अपने मित्र की खोज कराओ। मैं जन्म-भर तुम्हारा उपकार मानूँगी।

देवशङ्कर ने कहा—अभी तो तुम हमारे घर चल कर रहो, मैं सुन्दरमल के खोजने में यथाशक्ति कोशिश करूँगा।

लक्ष्मी ने कहा—भैया, मुझे अपने घर न ले चलो, मैं भी अब संन्यासिनी होकर तुम्हारे मित्र की खोज करूँगी। वे न मिलेंगे तो कहीं जीवन का अन्त कर डालूँगी।

लक्ष्मी की सुन्दरमल में ऐसी श्रद्धा देख कर देवशङ्कर का हृदय भर आया। उसने कहा—बहन, तुम अपना यह विचार छोड़ दो। एक बार मुझे प्रयत्न कर लेने दो। यदि सुन्दरमल नहीं मिलेंगे तो तुम अपने इच्छानुसार करना।

लक्ष्मी ने कहा—मैं तुम्हारे घर चली तो चलूँ, परन्तु कोई सुनेगा तो निन्दा करेगा कि अमुक घर की बहू इस तरह मारी-मारी फिरती है।

देवशङ्कर ने कहा—तुम इस बात की चिन्ता न करो। हमारे

घर चलो। तुम्हारा परिचय मेरी स्त्री के सिवा और किसी से न कराया जायगा।

देवशङ्कर के साथ जाने को लक्ष्मी तैयार हो गई। वह देवशङ्कर के साथ गाड़ी पर बैठ कर उसके घर गई। देवशङ्कर ने अपनी स्त्री के सिवा किसी को यह परिचय न दिया कि लक्ष्मी कौन है, कहाँ से आई है, और क्यों आई है ?

देवशङ्कर की स्त्री का नाम शान्ति था। शान्ति सुन्दरी थी, सुशिक्षिता थी और स्वभाव की बड़ी कोमल थी। लक्ष्मी के दुःख की बातें सुन कर और उसका परिचय पाकर उसका हृदय द्रवित हो गया। उसने लक्ष्मी को अपने गले से लगा लिया और दोनों रोने लगीं।

शान्ति ने लक्ष्मी को आराम देने में किसी बात की त्रुटि न होने दी। परन्तु देवशङ्कर की आज्ञा से वह लक्ष्मी को किसी बाहरी स्त्री से नहीं मिलने देती थी। दोनों सुशिक्षिता थीं, इस-लिए उनके दिन बड़ी प्रसन्नता से कटने लगे। परन्तु लक्ष्मी के चित्त में जो पति-प्रेम की आग धधक रही थी, उसे कोई खेल-तमाशा, कथा-कहानी और पुस्तक-पाठ बुझा न सका। लक्ष्मी रात-दिन चिन्तित रहती थी। उसका गुलाब ऐसा मुँह सदा मुरझाया रहता था। उसे देख कर शान्ति के हृदय में अशान्ति छा जाती थी।

देवशङ्कर के मकान के सामने रोज़ सबेरे ग़रीबों को चने बाँटे जाते थे। चना बँटते समय एक दिन देवशङ्कर भी बाहर

खड़ा था। उन ग़रीब भिक्षुकों के बीच उसने फटे हुए कपड़े लपेटे सुन्दरमल को भी बैठे देखा। सुन्दरमल को मालूम नहीं था कि यह देवशङ्कर का मकान है, नहीं तो शायद वहाँ पर वह कभी न ठहरता।

उसे देखते ही देवशङ्कर झट भीतर चला गया कि कहीं सुन्दरमल उसे देख न ले। भीतर जाकर उसने अपने एक नौकर को उँगली से दिखा कर कहा कि उस भिक्षुक को वहाँ से उठा लाओ। हमारा दूसरा मकान जो ख़ाली पड़ा है, उसके ऊपरवाले मञ्ज़िले पर उसे ले जाकर नहलाओ और अच्छे कपड़े पहनाओ। कपड़े यहाँ से ले जाओ। यदि वह हमारा नाम पूछे तो मत बताना, और यदि पूछे कि किस कारण से उसके साथ ऐसा अच्छा व्यवहार किया जा रहा है तो कहना कि आज हमारे मालिक ने सवेरे उठ कर सबसे पहले तुम्हारा मुँह देखा, इसी लिए वे तुम पर बहुत प्रसन्न हुए हैं। अब तुम्हें वह पढ़ा-लिखा कर और बहुत धन देकर एक प्रतिष्ठित आदमी बना देंगे।

नौकर का नाम रामधन था। अपने मालिक के आज्ञानुसार वह सुन्दरमल के पास गया और कहने लगा—आप मेरे साथ आइये।

सुन्दरमल भिक्षुक के भेस में तो था ही, उसने समझा कि शायद कुछ खाने को और मिलेगा। वह झट रामधन के साथ चल पड़ा। रामधन उसको एक मकान के दुमञ्ज़िले पर ले गया। वहाँ उसने सुन्दरमल से कहा—आज आपका सौभाग्य जागा

है। आज हमारे मालिक ने सबेरे सबसे पहले आपका मुँह देखा है, इसलिए उन्होंने आपके ऊपर बड़ी कृपा की है। उनकी आज्ञा से आप इस मकान में ठहराये जाते हैं। (कई कमरे दिखा कर) इस कमरे में आप रहिये, इसमें स्नान कीजिये, इसमें रात को सोइये और इसमें भोजन कीजिये। आपके लिए भोजन-वस्त्र का अभी प्रबन्ध कर दिया जायगा।

सुन्दरमल ने समझा कि यह नौकर मेरे साथ दिल्लगी करता है। इसलिए उसने हँस कर कहा—भई, तुम मेरी हँसी ही उड़ाने के लिए इतने ऊँचे चढ़ा लाये हो!

रामधन ने कहा—नहीं साहब, आप मेरी बातों को हँसी मत समझिये, मैं सच कहता हूँ।

सुन्दरमल ने कहा—अच्छा तो तुम्हारे मालिक का नाम क्या है?

रामधन ने कहा—अपने मालिक का नाम मैं नहीं बताऊँगा और आप नाम जानने का उद्योग भी मत कीजिये।

सुन्दरमल ने कहा—वाह, यह कैसे हो सकता है। जो मेरे साथ इतना उपकार करना चाहते हैं उनका मैं नाम भी न जानूँ! तब तो मैं इस मकान में नहीं रहूँगा।

रामधन ने कहा—आप घबड़ाइये नहीं, किसी दिन हमारे मालिक स्वयं आकर आपसे मिलेंगे।

इतने में तीन नौकर—एक पहनने के सुन्दर कपड़े लिये,

दूसरा ओढ़ने-बिछाने का सामान लिये और तीसरा खाने-पीने का सामान लिये—आ गये।

रामधन ने कहा—देखिये, मेरा कहना सच है न। अब कपड़े उतारिये, और नल के नीचे स्नान करके इन नये कपड़ों को पहन लीजिये।

एक कमरे में कई पलँग पड़े थे। रामधन ने उनको निकाल कर एक बड़े कमरे में बिछा दिया और उस पर सुन्दरमल का बिछौना बिछवा दिया।

सुन्दरमल मन्त्रमुग्ध की नाईं, रामधन के कहने के अनु-सार, काम करने लगा। वह स्नान करके और सुन्दर कपड़े पहन कर बहुत प्रसन्न हुआ। इसके पश्चात् उसने भोजन किया। उसे भोजन कराके सब नौकर-चाकर चले गये। केवल रामधन उसके पास रह गया। यह सब रहस्य सुन्दरमल को स्वप्न की तरह बोध होने लगा। वह पलँग पर लेट गया और रामधन से बातचीत करने लगा।

सुन्दरमल ने पूछा—तुम्हारा नाम क्या है?

रामधन ने उत्तर दिया—मेरा नाम रामधन है।

सुन्दरमल बोला—अच्छा रामधन, चलो अब तुम्हारे मालिक से मिल आवें।

रामधन ने कहा—नहीं साहब, बिना आज्ञा आप हमारे मालिक से नहीं मिल सकते। आप इस मकान में आराम से रहिये। किसी दिन हमारे मालिक आपसे स्वयं मिलेंगे।

सुन्दरमल कहने लगा—तब क्या मैं यहाँ क़ैद किया गया हूँ ?

रामधन ने कहा—नहीं, आप क़ैद नहीं किये गये हैं; बल्कि आप बड़ी प्रतिष्ठा के साथ यहाँ ठहराये गये हैं। आप घबड़ाते क्यों हैं ?

सुन्दरमल चुप रहा। उसकी समझ में यह बात आती नहीं थी कि उसका इतना आदर क्यों किया जा रहा है।

सुन्दरमल जबसे घर से निकला था, रास्ते में कहीं उसे पेट-भर भोजन नहीं मिला था। कई जगह उसने अपने कपड़े बेच कर भोजन किया था। कलकत्ते में वह चाहता तो अपने निर्वाह का कुछ न कुछ उपाय कर सकता था, क्योंकि उसे सेठ मङ्गलचन्द का लड़का समझ कर बहुत से मारवाड़ी उसकी मदद के लिए खड़े हो जाते। परन्तु विलासराय की करतूतों से उसके मन में ऐसी ग्लानि हुई थी कि उसने किसी को अपना परिचय देना उचित न समझा। बस, उसने भिक्षा ही को अपनी जीविका का प्रधान साधन बना लिया था।

अस्तु, पलँग पर लेटते ही उसे नींद आ गई और वह सो गया। रामधन उसे सोता छोड़ कर अपने मालिक देवशङ्कर के पास चला गया। देवशङ्कर उसका समाचार सुन कर बहुत प्रसन्न हुआ। उसने रामधन से कहा—रामधन, अब तुम्हारे ज़िम्मे यही काम दिया जाता है कि उन (सुन्दरमल) को किसी तरह का कष्ट न होने पावे। तुम सदा उनके साथ रहा करो।

परन्तु जब तक हम आज्ञा न दें तब तक हमारा या हमारे परिवार का कुछ भी परिचय न देना। सबेरे और शाम को तुम उनको घोड़ा-गाड़ी पर बैठा कर टहलने ले जाया करो। तीन-चार मील का चक्कर कर आया करो। परन्तु कहीं ठहरना नहीं, और न उनसे किसी की बातचीत होने देना। यथाशक्ति किसी को इस बात का भी पता न लगने देना कि हमारे यहाँ कोई ठहरा हुआ है। और, इसका कारण जानने की तुम भी कोई चेष्टा न करना। समय आने पर हम स्वयं प्रकट कर देंगे। उनको पढ़ाने के लिए शाम को एक मास्टर आया करेंगे। तुम आज मास्टर को साथ लेकर जाना और उनको समझा देना कि यदि आप जल्दी पढ़-लिख लेंगे तो हमारे मालिक अपनी बहन के साथ आपका विवाह कर देंगे।

रामधन ने आश्चर्य में आकर पूछा—बाबूजी, आप ये कैसी बातें कहते हैं?

देवशङ्कर ने कहा—बस, मैंने तुमसे पहले ही कह दिया है कि किसी बात का कारण जानने की चेष्टा न करना।

रामधन ने कहा—बाबूजी, भूल हो गई। क्षमा कीजिये।

देवशङ्कर कहने लगा—हाँ, तो तुम प्रातःकाल उनको नहला कर टहलाने ले जाना, फिर भोजन कराके उनको आराम करने देना। तुम भी वहीं भोजन कर लिया करना। जब वे आराम करके उठें तब उनके साथ शतरञ्ज या ताश खेल कर उनका चित्त बहलाना। फिर दो-तीन घण्टे मास्टर आकर उनको

पढ़ा जाया करेगा। शाम को फिर उनको टहलने ले जाना, रात को भी तुम वहीं भोजन करना और वहीं सोना। समझा, मैंने जो कहा है उसमें कुछ त्रुटि न होने पावे।

रामधन ने कहा—आप निश्चिन्त रहिये। आपने जो आज्ञा दी है उसका मैं अक्षर-अक्षर पालन करूँगा।

देवशङ्कर ने कहा--अच्छा, अब तुम मास्टर को साथ लेकर जाना।

रामधन ने कहा—बहुत अच्छा।

देवशङ्कर ने लक्ष्मण रसोइया को बुला कर कहा कि तुम दोनों समय हमारे दूसरे मकान में रसोई बना कर उसमें एक हमारे मित्र ठहरे हैं उनको भोजन करा आना; परन्तु न तो उनके विषय में कभी मुझसे या और किसी से कुछ पूछना और न कुछ किसी को बतलाना। और, न हमारे मित्र ही से कुछ पूछना। चुपचाप जाकर भोजन बनाना और जिमाकर चले आया करना।

इसी तरह देवशङ्कर ने अपने अन्य नौकरों को भी समझा दिया कि वे इस विषय में कुछ जानने या कहने-सुनने की चेष्टा न करें। देवशङ्कर ने इस काम को इतना छिपाया कि दूसरों को तो क्या, ख़ास उनके मुनीम-गुमाश्ते तक को इस बात का पता न लगने पाया कि देवशङ्कर के यहाँ कोई स्त्री आकर ठहरी है और कोई पुरुष उनका अतिथि बन कर उनके मकान में ठहरा है। नौकरों को समझा-बुझा कर देवशङ्कर

भीतर गया। वहाँ उसने शान्ति को अकेले में बुला कर सुन्दरमल के मिलने का और उसे अपने मकान में ठहराने का, तथा नौकरों को यह बात गुप्त रखने का सब समाचार कह सुनाया। यह सुन कर शान्ति बहुत प्रसन्न हुई। वह दौड़ कर लक्ष्मी को यह समाचार सुनाने के लिए जाने लगी। परन्तु देवशङ्कर ने उसका हाथ पकड़ कर कहा--वाह, फूली नहीं समाती हो। मैं जो कहता हूँ उसे सुन कर तब उछल-कूद मचाओ।

शान्ति ने कहा--अच्छा, कहिये जल्दी कहिये।

देवशङ्कर ने कहा--जल्दी कहने की बात नहीं है। ध्यान देकर सुनोगी तब तो ठीक होगा।

शान्ति ने कहा--अच्छा कहिये, मैं ध्यान से सुनूँगी।

देवशङ्कर ने कहा--सुन्दरमल के मिलने का समाचार तो तुम लक्ष्मी को सुना देना, परन्तु दो-तीन महीने तक मैं उन दोनों का परिचय नहीं होने देना चाहता। और न सुन्दरमल को अपना ही परिचय देना चाहता हूँ, क्योंकि सुन्दरमल ने एक बार मुझे कुछ दुर्वचन कहा था। यद्यपि मेरे मन में तो उसका रत्ती-भर भी ध्यान नहीं है, परन्तु सुन्दरमल को शायद अपने व्यवहार पर लज्जा मालूम हो या अभिमान आ जाय तो वह हमारे यहाँ नहीं रहेगा। इसलिए तुम लक्ष्मी से जाकर कहो कि वह प्रतिदिन एक या दो बजे, कोट-पतलून के ऊपर ओवर-कोट पहन कर, मास्टर बन कर सुन्दरमल को पढ़ाने जाया करे। सब कपड़े हम अभी तैयार करके मँगा देते हैं। लक्ष्मी को

चाहिए कि वह अपने को प्रकट न होने दे। यदि सुन्दरमल को मालूम हो जायगा कि यह लक्ष्मी है तो वह उससे घृणा करने लग जायगा और पढ़ना-लिखना तो दूर रहा, उसका यहाँ रहना भी कठिन हो जायगा। मेरी इच्छा है कि वह कुछ पढ़-लिख ले तब उसे किसी व्यापारिक काम-काज में लगा दें।

शान्ति ने कहा--अच्छा, मैं जाकर लक्ष्मी को समझा देती हूँ।

शान्ति लक्ष्मी के पास गई। लक्ष्मी उस समय बैठी रामायण का पाठ कर रही थी। शान्ति ने उसके गले में हाथ डाल कर, उसके मुँह के पास मुँह ले जाकर, और उसके मुँह की तरफ़ प्रेम और आनन्द भरी दृष्टि से देखते देखते कहा—मेरी प्यारी ननँद! मैं आज तुम्हें एक शुभ समाचार सुनाने आई हूँ।

लक्ष्मी ने हँस कर कहा—भाभी, मेरे भाग्य में शुभ समाचार कहाँ? देखो, रामायण में यह कथा बड़ी रोचक आई है। अनसूयाजी सीताजी को उपदेश दे रही हैं, तुम भी इसे सुन लो।

शान्ति ने हाथ से रामायण बन्द करके कहा—न, पहले मेरी कथा सुन लो।

लक्ष्मी ने कहा—अच्छा, कहो क्या कहती हो।

शान्ति ने कहा—ननँदोईजी को पकड़ मँगाया है।

लक्ष्मी ने आँखों में आँसू भर कर और शोकित हृदय से कहा—भाभी, हँसी क्यों करती हो!

शान्ति ने हँस कर कहा—नहीं, मेरी प्यारी ननँद! मैं हँसी नहीं करती। मेरा विश्वास न हो तो तुम अपने भैया से पूछ लो।

लक्ष्मी ने आनन्द से पुलकित होकर और शान्ति को हृदय से लगा कर कहा—मेरी प्यारी भाभी, मैं तुम्हारा विश्वास करती हूँ। अब तुम यह शुभ समाचार ख़ुलासा कह जाओ।

शान्ति ने देवशङ्कर से जो कुछ सुना था सब लक्ष्मी को कह सुनाया, और सुन्दरमल को पढ़ाने के लिए लक्ष्मी को मास्टर बनना पड़ेगा, यह कह कर शान्ति खिलखिला कर हँस पड़ी।

इतने में देवशङ्कर आ गया। शान्ति सकुचा कर अलग बैठ गई। लक्ष्मी रो रही थी। हृदय में अधिक आनन्द उमड़ आने से आँखों में आँसू आ जाते हैं। देवशङ्कर के हाथ में पतलून, कोट, कमीज़ और ओवरकोट का बण्डल था; और एक नया बूट भी उसी में बँधा था। देवशङ्कर ने ये सब चीज़ें एक कम्पनी से बनी-बनाई मोल मँगा ली थीं। उसने इन सब चीज़ों को लक्ष्मी के आगे रख दिया और कहा—इन सब चीज़ों के लाने का उद्देश्य तो तुम समझ गई होगी।

लक्ष्मी ने कहा—भैया, मुझे मास्टर बना कर तमाशा देखना चाहते हैं।

देवशङ्कर ने कहा—बहन, ऐसा करने से सुन्दरमल कुछ लिख-पढ़ कर मनुष्य हो जायगा। इसका परिणाम अच्छा ही

होगा। तुम कुछ सङ्कोच न करो। जिस मकान में सुन्दरमल हैं, वह मकान भी इस मकान की बग़ल ही में सटा है। यहाँ से उसमें जाने के लिए बीच में एक पुल है। तुमको नीचे उतरने और चढ़ने का कष्ट न उठाना पड़ेगा। ऊपर ही ऊपर से दो-तीन घण्टे उनको पढ़ा आना और अच्छी शिक्षा दे आना; परन्तु मेरी इतनी बात तो मानना कि जब तक मैं न कहूँ, तुम भूल कर भी अपना परिचय सुन्दरमल को न देना और न मेरे ही विषय में कुछ कहना। पुस्तकें अपनी भाभी के पास से ले जाओ। रामधन तुमको ले जाया-ले आया करेगा।

शान्ति ने हँस कर कहा—ननँदजी, देखना ख़ूब परिश्रम करके ननँदोईजी को शिक्षा देना।

लक्ष्मी ने हँस कर कहा—भैया ने भी तो तुम्हीं से शिक्षा पाई होगी।

देवशङ्कर मुसकुरा कर वहाँ से चला गया।

थोड़ी देर बाद रामधन आया। उस समय लक्ष्मी कोट-पतलून, ओवरकोट और बूट पहन कर मास्टर बन चुकी थी। यद्यपि पहले तो देवशङ्कर ने रामधन को इन कामों का भेद नहीं बताया था, परन्तु पीछे आवश्यक समझ कर सब बातों का भेद खोल दिया। और मुनीम-गुमाश्तों को भी सब हाल सुना कर ताकीद कर दी कि कोई बात कहीं प्रकट न होने पावे। इसी कारण जब रामधन भीतर आया तब लक्ष्मी को मास्टर के भेस में देख कर उसे कुछ आश्चर्य न हुआ। वह लक्ष्मी को

साथ लेकर पुल के रास्ते से दूसरे मकान में गया। उस समय सुन्दरमल जाग चुका था, और पलँग पर बैठे-बैठे अपनी दशा पर विचार कर रहा था।

रामधन उसके पास पहुँच कर कहने लगा—हमारे मालिक ने इन मास्टर साहब को आपको पढ़ाने के लिए भेजा है। आप दो-तीन घण्टे रोज़ इनसे पढ़ा कीजिये। आज ही से पढ़ना-लिखना प्रारम्भ कीजिये।

सुन्दरमल ने पलँग पर से उठ कर लक्ष्मी को प्रणाम किया। सङ्कोच के मारे लक्ष्मी ज़मीन में गड़ी जा रही थी। सुन्दरमल को देख कर और उसे प्रणाम करता देख कर हर्ष, लज्जा और सङ्कोच के मिश्रण से लक्ष्मी का हृदय विचलित हो गया। उसकी आँखों में आँसू आ गये। परन्तु देवशङ्कर की आज्ञा को याद करके उसने अपने को सँभाला। वह झट खिड़की के पास चली गई, और जेब से रुमाल निकाल कर मुँह पोंछने के बहाने आँखें पोंछने लगी। तब तक रामधन ने झुक कर सुन्दर-मल के कान में कहा—हमारे मालिक ने कहा है कि यदि आप दो-तीन महीने में अच्छी तरह लिखना-पढ़ना सीख लेंगे तो वे आपके साथ अपनी बहन का व्याह कर देंगे। (स्लेट, पेंसिल, काग़ज़, कापी, क़लम, दावात, और पढ़ने की किताबें ज़मीन पर रख कर) यह पढ़ने का सामान लीजिये और ख़ूब जी लगा कर मास्टर साहब से पढ़िये। ईश्वर की कृपा से आपका सौभाग्य उदय हुआ है।

रामधन की बातें सुन कर सुन्दरमल के आश्चर्य की सीमा न रही। वह सोचने लगा—इसका मालिक मुझ पर इतनी कृपा क्यों करता है? क्या सचमुच इसका यही कारण है कि उसने प्रातःकाल उठते ही मेरा मुँह देखा था? वह मेरे साथ अपनी बहन का विवाह भी कर देने की बात कहता है। मालूम नहीं, उसकी क्या जाति है? क्या उसको अपनी जाति-बिरादरी का भय नहीं है? और मैं ही दूसरी जाति की स्त्री के साथ कैसे विवाह कर लूँगा? परन्तु जब मैंने देश, घर और कुटुम्ब ही छोड़ दिया तब जात-पाँत का क्या झगड़ा! ख़ैर, जो होगा देखा जायगा। अब तो इसके मालिक के इच्छानुसार जी लगा कर पढ़ना ही चाहिए।

रामधन ने एक कमरा खोल कर उसमें से एक टेबल, दो-तीन कुर्सियाँ और एक आलमारी निकाल कर बाहर रख दी, कमरे में सफ़ाई करके वह चला गया।

रामधन के चले जाने पर मास्टर-रूपी लक्ष्मी टेबल के पास आकर कुर्सी पर बैठ गई। सुन्दरमल ने उठ कर उसके घुटनों पर अपना सिर रख दिया और कहा—मास्टर साहब! मैं बड़ा अभागा आदमी हूँ, मूर्ख हूँ, नासमझ हूँ, मुझे आप ज्ञान की शिक्षा दें जिससे मैं भी मनुष्य बन जाऊँ।

लक्ष्मी के जी में आता था कि एक बार ज़ोर से रोकर सुन्दरमल से लिपट जाय, परन्तु देवशङ्कर की बातें याद करके उसने अपने को बहुत सँभाला। सुन्दरमल प्रार्थना करके कुर्सी

पर बैठ गया। लक्ष्मी ने उसे पढ़ाना प्रारम्भ किया। कुछ लिखना भी सिखाया और दूसरे दिन याद करने के लिए उसे थोड़ा पाठ भी दिया। सन्ध्या होने में थोड़ा दिन शेष था तब रामधन आया और सुन्दरमल से टहलने को चलने के लिए कहा। लक्ष्मी उठ कर चलने लगी तब सुन्दरमल ने झुक कर उसे प्रणाम किया।

सुन्दरमल को घोड़ा-गाड़ी पर बैठा कर रामधन टहलाने ले गया। परन्तु देवशङ्कर के आज्ञानुसार न तो कहीं गाड़ी खड़ी होने पाई और न सुन्दरमल की किसी से बातचीत या परिचय ही होने पाया। तीन-चार मील का चक्कर कर लेने के पश्चात् दोनों मकान पर वापस आये। रसोइया ने भोजन तैयार कर रक्खा था। बस, आते ही सुन्दरमल को गरम ताज़ा भोजन खाने को मिला। रामधन ने भी वहीं उदर-पूर्ति की। भोजन के पश्चात् रामधन एक बार देवशङ्कर से मिल आया और फिर दोनों उसी मकान में सो गये।

देवशङ्कर ने सुन्दरमल को सबेरे भी टहलाने के लिए रामधन को आज्ञा दी थी, परन्तु पीछे से उसने रोक दिया। सबेरे जब सुन्दरमल सो कर उठा तब भी उसे अपनी अवस्था पर बड़ा आश्चर्य हुआ।

———

पन्द्रहवाँ परिच्छेद

सुन्दरमल का रात-दिन का कार्य-क्रम पहले तो इस प्रकार था—सवेरे उठ कर शौचादि से निवृत्त होना, फिर पाठ याद करना और लिखना। दस बजे भोजन करना, बारह बजे तक आराम करना और ताश-शतरञ्ज आदि खेलना (जिससे कि उसका मनोरञ्जन हो, क्योंकि ये तो उसकी पुरानी आदतें थीं। उन्हें एकदम से छुड़ा देना उचित नहीं था।) बारह बजे से चार बजे तक मास्टररूपी लक्ष्मी से शिक्षा ग्रहण करना और चार बजे के पश्चात् हवा खाने निकलना, फिर रात को भोजन करना और सो जाना।

लक्ष्मी बहुत ध्यान देकर सुन्दरमल को पढ़ाने लगी। लक्ष्मी का रूप बड़ा सुन्दर था। उसकी बोली बड़ी मधुर थी। सुन्दर मुख से मधुर वाणी निकल कर जब सुन्दरमल के कान में पहुँचती तब उसको ऐसा जान पड़ता कि स्वर्ग के देवता अमृत की बूँदें टपका रहे हैं। उसका हृदय प्रफुल्लित हो जाता था और लक्ष्मी की प्रत्येक शिक्षा उसमें प्रवेश कर जाती थी। पाठ पढ़ा देने और कुछ लिखना सिखा देने के बाद लक्ष्मी प्रति-दिन उसे धर्म और नीति का उपदेश दिया करती और महापुरुषों के जीवन-चरित्र सुनाया करती थी। सुन्दरमल उसे बड़े ध्यान से सुनता था। लक्ष्मी ने अपनी शिक्षाओं के

द्वारा सुन्दरमल के हृदय में विद्या की ओर इतनी रुचि पैदा कर दी कि उसने शाम को टहलने जाना भी छोड़ दिया और उस समय में भी वह अपना पाठ याद करता और लिखता था। थोड़े दिनों के पश्चात् उसने ताश-शतरञ्ज खेलना भी छोड़ दिया और उस समय को भी वह पढ़ने-लिखने में विताने लगा। इसलिए देवशङ्कर ने कसरत का कुछ सामान उस मकान ही में रखवा दिया जिससे वह कुछ व्यायाम वहीं कर लिया करे और पढ़ने-लिखने के अधिक परिश्रम से उसके स्वास्थ्य को हानि न पहुँचे।

तीन-चार महीने के लगातार परिश्रम से लक्ष्मी ने उसे हिन्दी लिखना-पढ़ना अच्छी तरह सिखा दिया और कुछ साधारण हिसाब-किताब भी बतला दिया। सुन्दरमल लक्ष्मी में बड़ी ही भक्ति रखने लगा। लक्ष्मी के सुन्दर मुख से कभी-कभी मधुर भाषण सुन कर और उसकी विद्या का चमत्कार देख कर सुन्दरमल मुग्ध होकर उसके पैरों पर गिर पड़ता और कहता कि आप कोई देवता हैं जो इस नीच, नराधम और पापी मनुष्य का उद्धार करने आये हैं। लक्ष्मी पीछे हट जाती और कहती कि आप ऐसा न करें, मैं तो आपका नौकर हूँ, आप मेरे मालिक हैं।—सुन्दरमल विनीत स्वर में कहता—न, आप मेरे गुरु हैं, मेरे देवता हैं, मैं आपका सेवक हूँ।

सुन्दरमल अच्छी तरह पुस्तकें पढ़ने और समझने लगा। देवशङ्कर ने उसके लिए शिक्षा की बहुत अच्छी-अच्छी पुस्तकें

मँगा दीं। सुन्दरमल का अधिकांश समय पुस्तकें पढ़ने में बीतने लगा। बारह बजे के पीछे मास्टर साहब भी पधारते थे और अपने मधुर व्याख्यानों से सुन्दरमल के कठोर हृदय को पिघला जाया करते थे।

एक दिन भोजन करने के पश्चात् सुन्दरमल और रामधन खिड़की के पास खड़े थे। वह खिड़की देवशङ्कर के मकान की तरफ़ थी। देवशङ्कर के मकान की छत पर लक्ष्मी टहल रही थी। रामधन ने लक्ष्मी को दिखा कर सुन्दरमल से कहा—यही हमारे मालिक की बहन हैं। इन्हीं के साथ आपका विवाह होगा। सुन्दरमल बड़ी उत्कण्ठा से तृषित नेत्रों से लक्ष्मी की रूप-सुधा का पान करने लगा। रामधन वहाँ से हट कर देवशङ्कर के पास चला गया। जब तक लक्ष्मी छत पर टहलती रही, सुन्दरमल एकटक उसकी ओर देखता रहा। जब वह घर में चली गई तब सुन्दरमल भी एक लम्बी साँस लेकर अपने पलँग पर आ पड़ा। वह सोचने लगा—मैं क्या से क्या हो गया? रामधन का मालिक मुझ पर बहुत प्रसन्न है। इसी से वह अपनी बहन का विवाह मेरे साथ करना चाहता है।

इतने में रामधन आ गया। उसने सुन्दरमल के पलँग के पास बैठ कर कहा—हमारे मालिक पूछते हैं कि आप हमारी बहन के साथ ब्याह करना चाहते हैं या नहीं?

सुन्दरमल ने कहा—तुम्हारी क्या राय है?

रामधन ने कहा—बाबूजी, मैं तो नौकर आदमी हूँ। मालिक

का हुक्म आपको सुना जाता हूँ और आपका हुक्म मालिक को सुना देता हूँ। मैं ऐसे मामलों में कुछ राय नहीं दे सकता।

सुन्दरमल ने कहा—रामधन, मैं तुमको अपना मित्र समझता हूँ, नौकर नहीं। इसलिए इस मामले में भी सम्मति देने का तुम्हें अधिकार है।

रामधन ने कहा—आपकी मुझ पर बड़ी कृपा है, जो मुझे अपना मित्र समझते हैं, परन्तु यदि इस मामले से मेरे मालिक का सम्बन्ध नहीं होता तो मैं आपकी आज्ञा का अवश्य पालन करता।

सुन्दरमल ने कहा—अच्छा, तुम जाकर अपने मालिक से कह दो कि उनके उपकारों के बोझ से मैं दबा हुआ हूँ, अतएव उनके इच्छानुसार चलना ही मेरा कर्त्तव्य है। परन्तु मेरी ओर से उनसे जाकर प्रार्थना करो कि मुझे सोचने के लिए थोड़ा समय दें।

रामधन यह कह कर चला गया कि कोई जल्दी नहीं है। आप दो-एक दिन में सोच-समझ कर उत्तर दीजियेगा।

सुन्दरमल के मन में थी कि इस विषय में मास्टर साहब से सम्मति ले। अतएव जब मास्टर साहब आये तब वह प्रणाम करके टेबल के पास जा बैठा। मास्टररूपी लक्ष्मी उसके हृदय के भावों को ख़ूब समझती थी। इसलिए उसने पहले ही पूछा—आज आप किसी विचार में पड़े मालूम होते हैं।

सुन्दरमल ने कहा—आप ने ठीक समझा है। मैं आज एक

ऐसी उलझन में फँस गया हूँ, जो आपके सुलझाये बिना नहीं सुलझ सकती।

लक्ष्मी ने हँस कर पूछा—कैसी उलझन है ?

इसके पश्चात् सुन्दरमल ने रामधन के मालिक की इच्छा कह सुनाई और कहा कि मैंने इस विषय में आपकी सम्मति लेने के लिए कुछ मुहलत माँग ली है।

लक्ष्मी ने पूछा—आपका पहले विवाह हुआ था कि नहीं ?

सुन्दरमल ने आँखों में आँसू भर कर कहा—मास्टर साहब, मेरा विवाह पहले हो चुका है। मेरी दुर्दशा की कहानी बड़ी ही करुणाजनक है। उसे सुन कर आपके हृदय में भी दया उत्पन्न होगी। मेरी स्त्री का नाम लक्ष्मी है। वह बड़ी सुन्दरी, सती और पतिव्रता है। परन्तु अपने एक कुटुम्बी के बहकाने से मुझे उसके चरित्र पर सन्देह उत्पन्न हुआ, और मैंने उसे छोड़ दिया। परन्तु मैं आज सच्चे हृदय से कहता हूँ कि वह निर्दोष है, उसका चरित्र निर्मल है, वह मेरे घर की लक्ष्मी है। जबसे उसका निरादर हुआ तभी से मेरे घर में दरिद्रता का वास हुआ, और मैं भिक्षुक बन गया।

सुन्दरमल के हृदय की असली बातें सुन कर लक्ष्मी का हृदय उमड़ आया। परन्तु उसने अपने को सँभाला।

इसके पश्चात् सुन्दरमल ने आदि से अन्त तक अपनी कहानी लक्ष्मी को सुना दी। और यह भी कह दिया कि

कृपा करके मेरा परिचय किसी को भी न दीजियेगा क्योंकि यहाँ मेरे अन्य सम्बन्धी हैं, वे मुझे फिर पकड़ लेंगे।

लक्ष्मी ने पूछा—अपनी स्त्री के चरित्र पर आपको जो सन्देह था वह दूर कैसे हुआ ?

सुन्दरमल ने कहा—मैं जब घर से भागा तब स्टेशन पर मुझे मेरा साथी मिला। वह था तो विलासराय का ही साथी परन्तु मेरी दुर्दशा की बातें सुन कर न जाने उसे क्यों दया आई और उसने मुझसे मेरे घर के बिगड़ने का सारा भेद कह दिया। वह मेरे घर का सब भला-बुरा हाल जानता था। तब मुझे मालूम हुआ कि लक्ष्मी निर्दोष है परन्तु आत्मग्लानि के मारे मैं फिर घर लौट कर नहीं गया।

सुन्दरमल की कहानी सुन कर लक्ष्मी रोने लगी। सुन्दरमल भी अपनी बीती घटनाएँ याद करके रोने लगा। फिर लक्ष्मी ने आँसू पोंछ कर पूछा—क्या अब आपका घर जाने का विचार नहीं है ?

सुन्दरमल ने कहा—इस जीवन में तो मैं अब वहाँ जाने का विचार भूल कर भी न करूँगा।

लक्ष्मी ने पूछा—क्या लक्ष्मी पर आपको कुछ भी दया नहीं आती ? वह आपके वियोग में रो-रो कर मर न जायगी !

सुन्दरमल की आँखों में आँसू आ गये। उसने कहा—लक्ष्मी को मैंने बहुत कष्ट दिया है। उसके सामने मुँह दिखाते मुझे लज्जा आती है।

लक्ष्मी का हृदय भर आया। उसने कहा—लक्ष्मी सती है। आप उसे कितना ही कष्ट दें परन्तु वह आपको कभी बुरा नहीं कहेगी। एक बार उसके सामने जाकर यही कह देने से कि "तुम निर्दोष हो, पवित्र हो" उसका हृदय सब कष्टों को भूल जायगा।

सुन्दरमल के हृदय में लक्ष्मी के लिए बड़ा अनुराग उत्पन्न हुआ। उसने रुद्धकण्ठ से कहा—मेरी लक्ष्मी मुझे फिर मिल जाती तो मैं यहीं कमाता-खाता और उसके साथ आनन्द-पूर्वक जीवन व्यतीत करता।

लक्ष्मी ने धीरज धर कर कहा—देखो, पुरुषों का हृदय कितना कठोर होता है। उस बेचारी अबला पर आपको दया नहीं आती जो उसे छोड़ कर भाग आये!

सुन्दरमल ने कहा—मैं सचमुच अपराधी हूँ। ईश्वर मुझे इसका दण्ड देंगे। अस्तु, अब मैं दूसरा विवाह नहीं करूँगा। जब तक जीऊँगा, लक्ष्मी ही का नाम लेकर अपना मुख पवित्र करूँगा।

लक्ष्मी के लिए इससे बढ़ कर आनन्द अभी तक नहीं मिला था। उसका हृदय उमड़ आया, परन्तु उसने अपने को बहुत सँभाला।

लक्ष्मी ने कहा—ऐसी प्रतिज्ञा न कीजिये। आप यह विवाह कर लें। विवाह करने से आपको धन भी मिलेगा और आप सुखी हो जायँगे। फिर लक्ष्मी को भी यहीं बुला लेना।

सुन्दरमल ने कहा—नहीं, अब मैं लक्ष्मी के साथ विश्वास-घात नहीं करूँगा। यदि मैं यह विवाह कर भी लूँ, तो जाति-

बिरादरी से अलग तो हो ही जाऊँगा। फिर लक्ष्मी भी मुझे छोड़ देगी।

लक्ष्मी ने कहा—ऐसा सोचना आपका भ्रम है। असल में पुरुष ही विश्वासघाती होते हैं। वे केवल विषय-वासना ही के लिए स्त्री से प्रेम करते हैं। परन्तु स्त्री अपना हृदय समर्पण कर देती है। स्त्री का प्रेम अनुपम है। आपने लक्ष्मी को छोड़ दिया परन्तु लक्ष्मी आपको कभी न छोड़ेगी। वह आपको जाति-बिरादरी से अधिक चाहती है।

सुन्दरमल ने कहा—आपका कहना सत्य है। लक्ष्मी साक्षात् लक्ष्मी है, देवी है। वह मुझे कभी न छोड़ेगी, परन्तु एक स्त्री के रहते दूसरा विवाह कर लेना उचित नहीं है। इससे दोनों स्त्रियों को कष्ट होता है।

लक्ष्मी ने कहा—यदि लक्ष्मी पतिव्रता है तो आपके दूसरा विवाह कर लेने पर वह कभी रुष्ट नहीं होगी। आप उसका तिरस्कार भी करेंगे तोभी वह आप पर रुष्ट नहीं होगी। इसलिए आप यह विवाह कर लें। इससे आपको सुख, धन, सुन्दरी स्त्री और एक सज्जन कुटुम्ब से सम्बन्ध, सब कुछ प्राप्त होगा।

सुन्दरमल ने कुछ सोच कर कहा—मेरी इच्छा तो ऐसी है कि अब दूसरा विवाह न करूँ। आपकी कृपा से अब मुझे लिखना-पढ़ना आ गया है। कहीं नौकरी-चाकरी कर लूँगा। अब गृहस्थी के झमेलों में फँसना ठीक नहीं।

लक्ष्मी ने कहा—वाह वा, आप तो अच्छे सज्जन हैं।

जिसने आपको इतना सुख दिया, आपको पढ़ाया-लिखाया और अब आपके साथ अपनी बहन का विवाह करना चाहता है, उसके उपकारों का बदला आप इस तरह चुकाना चाहते हैं, कि उसकी एक इच्छा भी—जो आपके लिए सुखदायक ही है—पूरी नहीं करना चाहते। यह कृतघ्नता का काम है। आप दूसरा विवाह कर लें, इसमें आपका कल्याण है।

सुन्दरमल बहुत सोच-विचार करके विवाह करने पर राज़ी हो गया। उसी समय रामधन आ गया। सुन्दरमल ने उससे कहा—जाकर अपने मालिक से कह दो कि मैं विवाह करने को तैयार हूँ।

रामधन चला गया। और थोड़ी देर पीछे वापस आया। उसने कहा—विवाह का मुहूर्त आज रात को दस बजे है। हमारे मालिक ने कहा है कि यह विवाह बिल्कुल गुप्त रीति से होगा। वे, उनकी बहन, एक पण्डित, आप और मैं, इन पाँच आदमियों के सिवा और किसी को विवाह के समय सम्मिलित नहीं किया जायगा।

सुन्दरमल बीच ही में कहने लगा—मास्टर साहब को तो ज़रूर विवाह के समय बुलाना होगा।

मास्टर साहब ने कहा—नहीं, मैं इस विषय में पहले ही उनसे क्षमा माँग चुका हूँ और अब आपसे भी निवेदन करता हूँ कि एक बहुत ही ज़रूरी काम के कारण मैं विवाह के समय उपस्थित नहीं हो सकता।

रामधन कहने लगा—और हमारे मालिक ने इतना और भी कहा है कि वे आपसे कुछ बातचीत नहीं करेंगे, और आप भी उनसे कुछ मत कहियेगा। विवाह हो जाने पर भी वे कुछ दिनों तक अपनी बहन को आपके यहाँ नहीं भेजेंगे।

सुन्दरमल ने कहा—इस तरह गुप्त विवाह करने का क्या प्रयोजन है?

लक्ष्मी ने कहा—मालिक के इच्छानुसार चुपचाप विवाह हो जाने दो।

सुन्दरमल ने कहा—अच्छा। मुझे सब बातें मञ्जूर हैं।

अस्तु, रात को बारह बजे लक्ष्मी का विवाह सुन्दरमल के साथ दुबारा हो गया। देवशङ्कर ने गुजरातियों की तरह के कपड़े पहने थे, और मोंछ के स्थान पर एक बड़ी-सी नक़ली मोंछ लगा रक्खी थी जिससे सुन्दरमल पहचान न सके। लक्ष्मी का विवाह गुपचुप हो गया। देवशङ्कर, सुन्दरमल, लक्ष्मी, रामधन और शान्ति के सिवा इस विवाह का हाल कोई नहीं जानता। शान्ति ही पण्डित बनी थी।

सोलहवाँ परिच्छेद

विवाह के दूसरे दिन मास्टर साहब आकर सुन्दरमल से कहने लगे कि आज से मैं आपको पढ़ाना बन्द करता हूँ। अब मैं आपसे गुरुदक्षिणा लेने आया हूँ।

सुन्दरमल ने कहा—जो आज्ञा हो, मैं पालन करूँगा।

मास्टर साहब ने कहा—पहले प्रतिज्ञा कर लीजिये कि मैं जो माँगूँगा उसे देने से आप इनकार नहीं करेंगे।

सुन्दरमल ने कहा—हाँ, मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि आप जो कुछ आज्ञा देंगे उसका मैं यथाशक्ति पालन करूँगा।

मास्टर साहब ने कहा—मैं तो यही माँगता हूँ कि एक बार आप मुझे अपनी जन्मभूमि का दर्शन करा दें।

सुन्दरमल ने संकुचित होकर कहा—आपने ऐसी बात माँगी जिसकी मुझको स्वप्न में भी आशा नहीं थी। यद्यपि मैं अपने प्रतिज्ञानुसार ऐसा ही करूँगा परन्तु कृपा करके आप भी एक बार फिर सोच लें कि अब कौन-सा मुँह लेकर मैं उस शहर में जाऊँ, जहाँ से अपमान सह कर निकल भागा था?

मास्टर साहब ने कहा—मैंने सब सोच-विचार कर लिया है। अब आप अपनी प्रतिज्ञा पूरी कीजिये।

सुन्दरमल ने कहा—अच्छा, जैसी आपकी इच्छा।

मास्टर साहब ने कहा—आज शाम को छः बजे की गाड़ी से चलना होगा। आप तैयार हो जाइये।

सुन्दरमल ने आश्चर्य में आकर कहा—आज ही!

मास्टर साहब ने मुसकुरा कर कहा—जी हाँ, आज ही।

सुन्दरमल ने कहा—परन्तु वहाँ चल कर रहेंगे किसके घर में? मेरी कथा तो आप सुन ही चुके हैं। मैं अपने घर में

नहीं रहूँगा। इससे आपको वहाँ ले जाकर कष्ट देना मैं उचित नहीं समझता।

मास्टर साहब ने हँस कर कहा—आप बहाने से मुझे बहका नहीं सकते। आप चलिये। आपकी नई स्त्री के भाई साहब ने वहाँ घर और नौकर-चाकर का सब प्रबन्ध कर दिया है। आपको कष्ट न होगा। आज शाम को ज़रूर चलना होगा।

सुन्दरमल चुप रहा।

छः बजने के एक घण्टा पहले ही से रामधन ने सुन्दरमल का और मास्टर साहब का सामान बाँध कर ठीक कर लिया। सेकेण्ड क्लास के तीन टिकट पहले ही से मँगा लिये गये थे। छः बजने के दस मिनट पहले दरवाज़े पर दो घोड़ागाड़ियाँ आकर खड़ी हो गईं। एक पर सामान लादा गया और दूसरी पर सुन्दरमल, मास्टर साहब तथा रामधन बैठ गये। हवड़ा स्टेशन पर पहुँच कर वे छः बजे जानेवाली गाड़ी से मारवाड़ के लिए रवाना हो गये।

देवशङ्कर का हाल जानने के लिए पाठक बहुत उत्सुक होंगे। ऊपर जो कुछ प्रपञ्च हुआ, अर्थात् सुन्दरमल का विवाह, मास्टर साहब का सुन्दरमल से गुरुदक्षिणा माँगना और फिर दोनों का मारवाड़ के लिए प्रस्थान करना, यह सब देवशङ्कर ही की करतूत थी। परन्तु इन कामों के सिवा देवशङ्कर ने कुछ और भी किया। उसे हम पाठकों को सुनाते हैं।

सेठ नारायणदास ने मोहिनी के मरने, सुन्दरमल के भाग

जाने और लक्ष्मी के भी ग़ायब हो जाने के समाचार यथा-समय देवशङ्कर को लिख भेजे थे। उनका पत्र पाने के कई दिन पश्चात् लक्ष्मी देवशङ्कर के पास पहुँच गई और उसके कई दिन बाद सुन्दरमल भी मिल गया। इन सब बातों का समाचार देवशङ्कर ने पत्र-द्वारा अपने पिता के पास भेजा। पत्र में यह भी लिख दिया था कि "अभी कुछ दिनों तक यह समाचार बिलकुल गुप्त रक्खा जाय।" पत्र में देवशङ्कर ने सेठ नारायणदास को एक बार कलकत्ते आने के लिए लिखा था। अस्तु, मोहिनी के मरने के पाँच महीने बाद सेठ नारायणदास कलकत्ते आये। देवशङ्कर ने स्टेशन पर ही उनको यह समझा दिया था कि अभी तक कलकत्ते में सुन्दरमल और लक्ष्मी की ख़बर अपने नौकर-चाकरों के सिवा किसी को नहीं है। अतएव कुछ दिन तक इस बात को छिपाये रखने ही में लाभ है। सेठ नारायणदास ने पुत्र की यह बात मान ली। जब वे अपने मकान के अन्दर पहुँचे तब रोती हुई लक्ष्मी उनके पैरों पर गिर पड़ी। सेठ नारायणदास की आँखों में भी आँसू आ गये। उन्होंने उसे धीरज देकर कहा—बेटी, घबड़ा मत। ईश्वर जो कुछ करता है अच्छा ही करता है। तुम पर इतना दुःख पड़ा है, इसमें भी ईश्वर ने कुछ लाभ ही सोचा होगा। तुम ईश्वर पर सदा भरोसा रक्खो। वे तुम्हारा कल्याण करेंगे।

उस दिन नारायणदास इतना ही कह कर बाहर चले आये। बाहर बैठक में बैठ कर देवशङ्कर ने अपने पिता से सुन्दरमल के

भिक्षुक-मण्डली में मिलने, मकान में उनके ठहराये जाने, लक्ष्मी का मास्टर बन कर सुन्दरमल को पढ़ाने जाने आदि का सब समाचार कह सुनाया।

अब सेठ नारायणदास ने उसी दिन से यह उद्योग करना प्रारम्भ किया कि किसी प्रकार सुन्दरमल की सम्पत्ति विलास-राय से वापस मिले। एक दिन उन्होंने अपने शहर के रहनेवाले बहुत से प्रतिष्ठित महाजनों की सभा की। उसमें सेठ मङ्गलचन्द के परिवार की दुर्दशा का सारा वृत्तान्त उन्होंने कह सुनाया। कलकत्ते में सेठ मङ्गलचन्द की बड़ी प्रतिष्ठा थी। प्रायः सभी बड़े-बड़े आदमी उनके किसी न किसी उपकार के बोझ से दबे थे। यद्यपि उनकी मृत्यु का समाचार सबको मिल चुका था, परन्तु उस दिन सेठ नारायणदास के मुख से उनके परिवार की दुःख-कथा सुन कर सब उपस्थित महाजनों की आँखों में आँसू आ गये। सबने एक स्वर से कहा कि शीघ्र ही सेठ मङ्गलचन्द की सम्पत्ति विलासराय से छीन कर सुन्दरमल को देनी चाहिए।

सेठ नारायणदास ने कहा—आप लोग सेठ मङ्गलचन्द के परिवार के साथ बड़ा उपकार करना चाहते हैं। आप लोगों से ऐसी ही आशा भी थी। अब इस विषय में मैंने जो उपाय सोच रक्खा है वह आप लोगों को सुनाता हूँ। आइये, हम सब मिल कर स्वदेश में अपने राजा के पास चलें, और उनसे सुन्दरमल की दुर्दशा का समाचार कहें। वे विलासराय को दण्ड देने में हम लोगों से अधिक समर्थ हैं।

सेठ नारायणदास की सम्मति सबको बहुत पसन्द आई। सबने स्वदेश चलने की इच्छा प्रकट की। अस्तु, उनमें से मुखिया-मुखिया लोग सेठ नारायणदास के साथ उसी दिन सन्ध्या की गाड़ी से मारवाड़ के लिए रवाना हो गये। उसी रात को सुन्दरमल के साथ लक्ष्मी का पुनर्विवाह हुआ था। और दूसरे दिन, सन्ध्या के समय, वे दोनों भी रामधन को साथ लेकर मारवाड़ के लिए रवाना हो गये थे। उनके साथ ही उसी गाड़ी में देवशङ्कर भी, घर की स्त्रियों को साथ लेकर, रवाना हुआ था, परन्तु रामधन और मास्टररूपी लक्ष्मी के सिवा सुन्दरमल को इस बात की कुछ ख़बर न थी। रामधन प्रत्येक स्टेशन पर उतर कर देवशङ्कर से मुलाक़ात करता था। देवशङ्कर भी लक्ष्मी और सुन्दरमल के आराम के लिए उससे पूछा करता था।

राह में कोई लिखने योग्य बात नहीं हुई। वे लोग मारवाड़ के उस स्टेशन पर, जहाँ उन्हें पहुँचना था, रात के आठ बजे उतरे। उसी वक़्त उनको सवारी तैयार मिली। क्योंकि सेठ नारायणदास ने पहले से ही प्रबन्ध कर रक्खा था। सुन्दरमल, मास्टर साहब यानी लक्ष्मी और रामधन ये तीनों रात को ग्यारह बजे शहर में पहुँचे। क्योंकि उनका शहर स्टेशन से कुछ दूर था।

सुन्दरमल और लक्ष्मी के चले जाने पर उनकी हवेली ख़ाली पड़ी थी। नौकर-चाकर अपने-अपने घर चले गये थे।

सेठ नारायणदास ने सरकारी आज्ञा लेकर उस हवेली में ताला जड़ कर के ताली सरकार के हवाले कर दी थी। वे और उनके साथी महाजन लोग सुन्दरमल के पहुँचने के एक दिन पहले ही वहाँ पहुँच चुके थे। उन लोगों ने अपना एक मिनट भी व्यर्थ नहीं खोया। वे शीघ्र ही राजा से मिले, और अपने आने का उद्देश्य कह सुनाया। राजा बड़े दयालु और प्रजा-पालक थे। सेठ मङ्गलचन्द के परिवार की दुर्दशा का हाल महाजनों के मुँह से सुन कर उनको बड़ा खेद हुआ। उन्होंने उसी वक़्त विलासराय को गिरफ़्तार करवा लिया। और दूसरे दिन, सुन्दरमल के आ जाने पर, इस मुक़द्दमे के सुने जाने की आज्ञा दी। सेठ नारायणदास ने राजा से सुन्दरमल के मकान की ताली माँग ली, और उस मकान में सुन्दरमल और लक्ष्मी के आराम का सब प्रबन्ध करवा दिया।

देवशङ्कर अपने घर चला गया। सुन्दरमल की तबीयत स्टेशन पर से ही ख़राब थी। वह अपनी हीन दशा का चित्र अपने हृदय में देखता था।

वह सोचता था कि रात तो किसी तरह कट जायगी परन्तु कल सवेरे अपना कौन-सा मुँह लोगों को दिखाऊँगा। इस चिन्ता में वह बहुत व्यग्र था।

रात को ग्यारह बजे जब वह अपनी हवेली के सामने पहुँचा तब भी उसका चित्त ठिकाने नहीं था। सेठ नारायणदास के कई नौकर-चाकर दरवाज़े पर खड़े थे, परन्तु उसने किसी

से कुछ बातचीत नहीं की। हाँ, अपनी हवेली का दरवाज़ा देखते ही एक बार उसके हृदय में बड़ी उत्तेजना हुई थी।

हवेली में दो कमरे सजाये गये थे। एक सुन्दरमल के लिए और दूसरा लक्ष्मी के लिए। वे दोनों अपने-अपने कमरों में उतारे गये। सुन्दरमल लक्ष्मी का हाल जानने के लिए बहुत व्यग्र था। पर उसने किसी नौकर से लक्ष्मी के सम्बन्ध में कुछ नहीं पूछा। थोड़ी देर के पश्चात् एक रसोइया दो थालों में सुस्वादिष्ट भोजन लेकर आया। परन्तु तबीयत ठीक न होने का बहाना करके सुन्दरमल केवल थोड़ा-सा दूध पीकर पलँग पर लेट गया। मास्टर अर्थात् लक्ष्मी ने ख़ूब डट कर भोजन किया। उसे क्या चिन्ता थी। उसने तो अपना प्राणधन पा लिया। अब उसे प्रसन्नता क्यों न होती। भोजन करके लक्ष्मी भी अपने में पलँग पर जा लेटी।

एक घण्टे में सब नौकर-चाकर अपना-अपना काम पूरा करके कुछ तो बाहर जाकर सो गये और कुछ अपने घर चले गये। हवेली में सन्नाटा छा गया। तब लक्ष्मी ने अपना मास्टरी वेष परित्याग किया, और अपने वही कपड़े—जिन्हें वह सुन्दरमल के सामने पहना करती थी और जो उसके साथ ही थे—सन्दूक़ में से निकाल कर पहन लिये। अपने कमरे का दरवाज़ा धीरे से बन्द करके वह सुन्दरमल के कमरे में धीरे-धीरे घुसी। सुन्दरमल को नींद आ गई थी। कुछ तो चिन्ता और कुछ राह की थकावट से उसके शरीर में शिथिलता आ गई थी। लक्ष्मी उसके पैरों

के पास पलँग पर बैठ कर पैर दबाने लगी। एकाएक सुन्दरमल की आँख खुल गई। उसने सामने लक्ष्मी को बैठे पाया। लक्ष्मी को देखते ही वह उठ बैठा, और उसे अपनी दोनों भुजाओं के बीच में पकड़ छाती से लगा कर कहने लगा—लक्ष्मी, प्यारी लक्ष्मी, तुम अब तक कहाँ थी? मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा हूँ। क्या सचमुच तुम मेरे पास बैठी हो? लक्ष्मी, बोलो; मेरा सन्देह दूर करो।

लक्ष्मी का हृदय भर आया था। उसकी आँखों में आँसू उमड़ आये थे और कण्ठ रुक गया था। बड़ी कठिनाई से हृदय को दबा कर लक्ष्मी ने कहा—"आप स्वप्न नहीं देख रहे हैं, सचमुच आपकी दासी आपके पास बैठी है।" वह इतना ही कह सकी। अब सुन्दरमल के हृदय में लक्ष्मी के लिए बड़ा अनुराग था। कलकत्ते से ही वह उसके गुणों पर मोहित था। लक्ष्मी को अपनी भुजाओं के बीच में पाकर उसका हृदय करुण रस से प्लावित हो चला। वह सिसक-सिसक कर रोने और अपने अपराधों के लिए बार-बार लक्ष्मी से क्षमा माँगने लगा।

लक्ष्मी यही कहती रही कि आप मेरे मालिक हैं, मैं आपकी दासी हूँ। आपका मेरे साथ कोई व्यवहार अपराध नहीं कहा जा सकता।

सुन्दरमल ने कहा—लक्ष्मी, तुम देवी हो, साक्षात् लक्ष्मी हो। मैंने तुम्हारा निरादर किया था, उसी के फल से मेरा परिवार नष्ट हुआ। मेरी मा इसी चिन्ता से मर गई। मेरा धन

इसी कारण लुट गया। मैं तुम्हारी सम्मति लेकर कोई काम करता तो आज इस संसार में मेरे समान सुखी कोई नहीं होता। (पैरों पर पड़ कर) अब तुम मेरा अपराध क्षमा करो। बीती बातों को भुला दो।

"यह आप क्या कर रहे हैं?" ऐसा कह कर लक्ष्मी ने पैर हटा लिया। उसे उस दिन के सिवा, जब कि सुन्दरमल अपनी बुराइयों के लिए पश्चात्ताप कर रहा था और बार-बार उसके गुणों की प्रशंसा कर रहा था, इतना आनन्द कभी नहीं मिला था।

सुन्दरमल ने कहा—अच्छा, तुम अब तक इस हवेली में अकेली रहती रही होगी। बड़ा कष्ट हुआ होगा।

लक्ष्मी ने हँस कर कहा—आज अब इस चर्चा को छोड़िये, आप बहुत थक गये हैं, आराम कीजिये।

अस्तु, लक्ष्मी को पाने से मन में परमानन्दित होकर सुन्दरमल लेट गया और मन में भाँति-भाँति की कल्पना करता हुआ सो गया। लक्ष्मी भी सो गई।

चार बजे सबेरे, जब सुन्दरमल सो ही रहा था, लक्ष्मी धीरे से उठ कर अपने कमरे में चली गई और लक्ष्मी का वेष परित्याग कर मास्टर साहब बन गई। पहले उसने पेंसिल से एक पत्र लिखा और सुन्दरमल के तकिये के नीचे रख दिया। फिर अपने कमरे में आकर पलँग पर सो गई।

सबेरा हुआ। सुन्दरमल उठा। रात की बातें याद

आते ही वह लक्ष्मी को ढूँढ़ने लगा। उसे अच्छी तरह याद था कि लक्ष्मी रात को उसी के पास पलँग पर सो गई थी। अब वह लक्ष्मी के लिए बहुत आकुल-व्याकुल हो गया। उसने नौकरों को बुलाया, और पूछा कि "मेरी स्त्री कहाँ है?" उनमें से एक भी नौकर को सुन्दरमल पहचानता न था। नौकरों ने कहा—आपने स्वप्न देखा होगा। यह हवेली तो बिल्कुल बन्द थी। इसमें कोई रहता नहीं था। बस, आपके रहने के लिए यह कल खोली गई है। आपकी स्त्री कहाँ है, यह बात हम लोगों को मालूम नहीं।

नौकरों की बातें सुन कर सुन्दरमल ने समझा कि मैंने स्वप्न देखा होगा। स्वप्न समझ कर भी लक्ष्मी से मिलने के लिए उसका चित्त बहुत उत्कण्ठित था। वह चिन्तित होकर उठा। शौच आदि से निवृत्त होकर उसने स्नान किया। मास्टर साहब तब तक सोते ही रहे। आठ बज गये। सुन्दरमल ने आकर मास्टर साहब को जगाया और कहा—वाह, आप कब तक सोवेंगे?

मास्टर साहब उठ बैठे और हँस कर कहने लगे—रास्ते की थकावट से नींद बहुत आ गई।

सुन्दरमल ने कहा—शौच आदि से निवृत्त होकर आइये। आपको स्वप्न की एक बड़ी अद्भुत कहानी सुनाऊँगा।

मास्टर साहब हँसते हुए कमरे से बाहर चले गये। नौकर-चाकर सब दूसरी तरफ़ थे। इससे उनको किसी ने न देखा। वे एक दूसरे कमरे में पहुँचे, जहाँ दो-तीन नौकरनियाँ स्नान

आदि का सब सामान लिये खड़ी थीं। इन नौकरनियों को देवशङ्कर ने भेजा था, जो उसके घरवालों के साथ कलकत्ते से आई थीं। लक्ष्मी उन सबको पहचानती थी। मास्टर का वेष उतार करके लक्ष्मी शौच और स्नान आदि से निवृत्त हुई। और, फिर मास्टर का वेष बना कर सुन्दरमल के पास गई।

सुन्दरमल बाहर बरामदे में एक कुर्सी पर बैठा हुआ लक्ष्मी की याद में बेसुध हो रहा था। मास्टर साहब उसके पासवाली कुर्सी पर बैठ गये। सुन्दरमल ने उनकी ओर देख कर हँसते हुए कहा—हाँ, अब आपको रात का स्वप्न सुनाता हूँ।

मास्टर साहब ने हँस कर कहा—सुनाइये।

सुन्दरमल ने रात की बीती बातें एक-एक करके सुना दीं और फिर कहा—देखिये, ये बातें तो हैं स्वप्न की परन्तु फिर भी मुझे धोखा होता है कि जैसे सचमुच हुई हैं।

इतने में रामधन ने आकर सुन्दरमल के हाथ में एक काग़ज़ का टुकड़ा दिया और कहा—मैं बिछौना उठा रहा था तब यह काग़ज़ मुझे तकिये के नीचे मिला। सुन्दरमल ने उसे पढ़ा। उसमें यह लिखा था—

"प्राणनाथ,

अब आपके हृदय में मेरे लिए स्थान नहीं रहा। क्योंकि आपने कलकत्ते में किसी स्त्री से विवाह कर लिया। वह आपको मुझसे अधिक प्रिय हुई होगी, तभी तो आपने मुझे स्मरण न रक्खा। दो स्त्रियों से पुरुष सुखी नहीं रह सकते। मेरे रहने

से आपके सुख में बाधा पहुँच सकती है, अतएव मैं जाती हूँ। अब केवल आपका नाम रट-रट कर जीवन बिताऊँगी।

आपकी दासी,

लक्ष्मी।"

पत्र पढ़ते ही सुन्दरमल चिल्ला उठा—मैंने स्वप्न नहीं देखा। मैंने सचमुच कल रात को लक्ष्मी के साथ बातचीत की है। यह उसी के हाथ की लिखावट है। हाय! लक्ष्मी, तुम कहाँ चली गई। तुम्हारे बिना मेरा जीना असम्भव है।

यह कह कर सुन्दरमल उठ खड़ा हुआ, और पागल की भाँति कभी कमरे में और कभी बाहर आने-जाने लगा। वह बार-बार "हाय लक्ष्मी" "हाय लक्ष्मी" पुकारने लगा।

सत्रहवाँ परिच्छेद

अब हम विलासराय का कुछ हाल लिखना उचित समझते हैं।

सेठ नारायणदास और उनके साथी महाजन लोग जब कलकत्ते से चले तब उनकी हवेलियों में उनके रवाना होने और स्टेशन पर सवारी भेजने के तार आये। विलासराय कौवे की तरह सदा चौकन्ने रहते थे। वे सोचने लगे कि इतने आदमी एक साथ क्यों चले आ रहे हैं। सब से पहले उनकी समझ में यही बात आई कि कहीं ये लोग मेरे ही विरुद्ध

ऊधम मचाने न आते हों। वास्तव में उनकी यह आशङ्का निर्मूल न थी। यह बात ध्यान में आते ही उनके पेट में भय के चूहे कूदने लगे। उन्होंने सोचा कि कहीं मोहिनी को विष देने का भेद न खुल जाय। इसलिए उन्होंने उस नौकरनी को भी विष देकर मरवा डाला, जिसने मोहिनी की दवा में विष मिलाया था। उस नौकरनी के मरने के दो ही तीन दिन बाद विलासराय को राजा ने पकड़वा मँगाया। वे हवालात में बन्द रक्खे गये। माँगिया रसोइया भी, जो विलासराय से बहुत जलता था, डर गया। उसने सोचा कि कहीं मुझपर भी न आफ़त आवे। इस भय से वह विलासराय के विपक्ष में हो गया। उसका उद्देश्य यह था कि विलासराय की निन्दा करने से सुन्दरमल आदि उससे प्रसन्न होकर उसका अपराध क्षमा कर देंगे।

जिस समय विलासराय पकड़े गये, शहर-भर के छोटे-बड़े प्रायः सभी आदमी उनकी निन्दा करने लगे।

एक बुढ़िया ब्राह्मणी ने कहा—अच्छा हुआ जो विलासराय पकड़ा गया। भगवान् उसे फाँसी दे दे। उसने मेरी जगह नाहक़ छिनवा ली थी, यह उसी का फल है।

एक ब्राह्मण कहने लगा—साले को अच्छी सज़ा मिली। एक दिन मैं ब्रह्मपुरी में जीमने गया था तब इसने मेरा कण्ठ पकड़ कर धक्का दिया था।

सुलफ़ेबाज़ों की मण्डली में भी विलासराय की कीर्ति-कथा होने लगी।

एक नाई ने अपने घर में बैठे-बैठे कहा—विलासराय बड़ा पाजी है, भगवान् ने उसकी अच्छी ख़बर ली। एक दिन उसने मुझे चोरी लगा दी थी। वह मेरी जजमानी से भी मुझे हटाना चाहता था।

एक भङ्गी ने जब रास्ते में झाड़ू देते हुए विलासराय के पकड़े जाने का समाचार सुना तब वह भी कहने लगा—ईश्वर दुष्टों को ऐसा ही दण्ड देते हैं। एक दिन मैं सुन्दरमल से कुछ खाने को माँग रहा था, इस पाजी ने मुझे गालियाँ देकर निकलवा दिया। आज ख़ूब फँसा है।

एक धोबी कहने लगा—विलासिया बड़ा नमकहराम है। जिस थाली में खाता है उसी में छेद करता है। सुन्दरमल का धन लूट कर इसने उसे राह का भिखारी बना दिया। सुन्दरमल के कपड़ों की धुलाई में से एक दिन उसने मेरे पाँच आने पैसे कटा दिये।

इसी प्रकार शहर-भर के धनी-ग़रीब, पण्डित-मूर्ख, नाई-भङ्गी और धोबी तक विलासराय का कीर्तन करने लगे। विलासराय को दुखी देख कर प्रायः सभी लोग सुखी हुए। शहर-भर में शायद ही कोई आदमी ऐसा छुट गया हो जिसको विलासराय ने कुछ न कुछ कष्ट न पहुँचाया हो।

जो लोग विलासराय के मित्र कहलाते थे वे भी उनकी निन्दा

करते थे। सच है, दुष्ट आदमी का कोई मित्र नहीं होता। दुष्ट मनुष्य अपनी दुष्टता सफल होने पर प्रसन्न होता है परन्तु यह नहीं सोचता कि उसका परिणाम उसी के लिए कितना भयङ्कर हुआ है। संसार में अपकीर्ति से मृत्यु अच्छी है। परन्तु विलासराय के कान के पास कोई उनकी निन्दा कर नहीं सकता था। इसी से वे सदा निर्भय रह कर लोगों को कष्ट देने की युक्ति भिड़ाया करते थे। मनुष्य को उचित है कि वह स्वयं सोच कर अच्छा-बुरा काम करे; समालोचना की आशा न रक्खे। क्योंकि अच्छी समालोचना तो बहुत बड़े आकार में कार्यकर्त्ता के कान में घुसेड़ी जाती है परन्तु बुरी आलोचना का कान तक पहुँचना बहुत कठिन है। निन्दा की बातों की चर्चा लोग निन्दित व्यक्ति के सामने बहुत कम करते हैं।

अठारहवाँ परिच्छेद

दिन के नव बजे सेठ नारायणदास और शहर के मुखिया-मुखिया महाजन लोग राजा के पास गये। देवशङ्कर भी साथ था। लक्ष्मी ने पत्र-द्वारा उसे रात की और सवेरे की दिल्लगी का पूरा विवरण लिख भेजा था। यह दिल्लगी करने का यही मतलब था कि सुन्दरमल के हृदय में वास्तविक करुणा, दया और प्रेम उत्पन्न हो। क्योंकि करुणा, दया और प्रेम से मनुष्य का हृदय पवित्र हो जाता है। कठोरता और कपटाचार दूर

हो जाते हैं। देवशङ्कर ने इन सब बातों की सूचना सेठ नारायणदास को दे दी थी। इतना ही नहीं बल्कि उसने लक्ष्मी के साथ सुन्दरमल के पुनर्विवाह की बात भी कह दी थी। सेठ नारायणदास ने देवशङ्कर से जो कुछ सुना था, वह आदि से अन्त तक, राजा को सुना दिया। राजा बड़े उदार, दयालु और प्रजापालक थे। वे बड़े हँसमुख, प्रसन्नचित्त और सरस हृदय के थे। लक्ष्मी के पातिव्रत और देवशङ्कर की सच्ची मित्रता का समाचार सुन कर उनके करुणापूर्ण हृदय में आनन्द ही आनन्द उमड़ आया। उन्होंने सेठ नारायणदास आदि महाजनों से कहा—चलिये, हम सुन्दरमल के मकान ही पर इस मुक़द्दमे का फ़ैसला करेंगे।

जिस समय सुन्दरमल "लक्ष्मी, लक्ष्मी" पुकारता हुआ हवेली के अन्दर पागलों की तरह घूम रहा था ठीक उसी समय उसके मकान पर राजा की सवारी आई। साथ में उनका दीवान तथा शहर के मुखिया लोग थे। सेठ नारायणदास ने पहले ही से उनके बैठने का अच्छा प्रबन्ध करा रक्खा था। परन्तु सुन्दरमल को इन बातों की कुछ भी ख़बर न होने दी थी।

एक बड़े कमरे में राजा साहब का दरबार लगा। विलासराय अभी नहीं लाये गये थे। राजा ने बैठते ही सुन्दरमल को लाने की आज्ञा दी। रामधन बाहर खड़ा था। सेठ नारायणदास का इशारा पाते ही वह भीतर गया। उसने

सुन्दरमल से कहा—आपको राजा साहब बुलाते हैं, बाहर चलिये।

सुन्दरमल ने आश्चर्य में आकर पूछा—राजा साहब कहाँ हैं?

रामधन ने कहा—बाहर बड़े कमरे में हैं। शहर के और भी बड़े-बड़े आदमी बैठे हैं। आप शीघ्र पधारिये।

सुन्दरमल की मानसिक दशा यद्यपि ख़राब थी परन्तु राजा की आज्ञा को कौन टाल सकता था। वह कपड़े पहन कर बाहर गया और राजा तथा अन्य उपस्थित जनों को अभिवादन करके सामने खड़ा हो गया।

राजा ने पूछा—सुन्दरमल, इस शहर के मुखिया लोगों ने मिल कर मेरे पास यह प्रार्थना की कि "विलासराय ने सुन्दरमल का धन लूट कर उसे दरिद्र बना दिया, राजसभा में इस पर विचार होना चाहिए।" सो तुम अपनी सारी कथा कह सुनाओ। मैं तुम्हारा लूटा हुआ धन तुम्हें फिर वापस दिलाऊँगा।

सुन्दरमल आपे में नहीं था। वह ज़ोर से रो उठा और बोला—मुझे तो मेरी लक्ष्मी मिल जानी चाहिए। और किसी चीज़ की मुझे ज़रूरत नहीं है।

राजा को सब बातें मालूम तो थीं ही, उन्होंने देखा कि यह तो लक्ष्मी के प्रेम में पागल हो रहा है, पहले लक्ष्मी से इसकी भेंट करानी चाहिए। अस्तु, उन्होंने कहा—अच्छा,

यदि लक्ष्मी मिल जाय तो पीछे तुम अपना सब हाल साफ़-साफ़ बयान करोगे?

सुन्दरमल ने विमुग्धभाव से कहा—हाँ।

राजा जहाँ बैठे थे वहाँ पास ही एक कोठरी थी। उसमें दो दरवाज़े थे। एक तो उस बड़े कमरे में और दूसरा हवेली के अन्दर की तरफ़। कमरे की तरफ़ वाला दरवाज़ा बन्द था।

राजा ने कहा—अच्छा, तुम इस कोठरी में चले जाओ, तुम्हारी लक्ष्मी इसमें मिलेगी।

सुन्दरमल चुपचाप प्रेमोन्मत्त की भाँति कोठरी का दरवाज़ा खोल कर भीतर गया। सामने लक्ष्मी खड़ी मिली। सुन्दरमल को देखते ही लक्ष्मी उसके चरणों पर गिर पड़ी और सुन्दरमल, जो उसको पकड़ना चाहता था, अधिक आनन्द के आवेश में विह्वल होकर मूर्च्छित हो गया।

सेठ नारायणदास की आज्ञा से रामधन कोठरी के भीतर गया और सुन्दरमल के मुँह पर जल छिड़कने लगा। थोड़ी देर में उसकी मूर्च्छा जाती रही। वह उठ बैठा और कहने लगा—मेरी प्यारी लक्ष्मी, तुम मुझे छोड़ कर कहाँ चली गई थी?

रामधन ने कहा—आप बाहर पधारिये, राजाजी बुलाते हैं।

सुन्दरमल के एकमात्र मित्र मास्टर साहब थे, जिनको वह हवेली के अन्दर छोड़ आया था। उसने सोचा कि इस मामले में मास्टर साहब की सलाह भी लेनी चाहिए। इसलिए उसने कहा—मास्टर साहब को बुला लाओ।

रामधन ने कहा—राजाजी बहुत देर से बैठे हैं। आप उनके पास जल्द चलिये। मैं मास्टर साहब को पीछे बुला लाऊँगा।

लक्ष्मी ने कहा—राजाजी को देर तक बैठा कर कष्ट देना ठीक नहीं। आप पधारिए, मास्टर साहब को मैं भेजती हूँ।

सुन्दरमल उठ कर खड़ा हो गया और सतृष्ण दृष्टि से लक्ष्मी की ओर देख कर कहने लगा—तुम फिर तो भाग न जाओगी?

लक्ष्मी हँसने लगी। उसने क़हा—नहीं, आप मेरी चिन्ता अब न कीजिये। मैं अब नहीं भागूँगी।

सुन्दरमल ने कहा—अच्छा, शपथ खाओ।

लक्ष्मी ने कहा—मैं आपकी शपथ खाती हूँ कि अब नहीं भागूँगी।

सुन्दरमल पल-भर कोई बात स्मरण करके फिर कहने लगा—अच्छा, कलकत्ते में मैंने दूसरा विवाह कर लिया है। यह बात तुमको कैसे मालूम हो गई, और तुम मुझसे नाराज़ तो नहीं हो गई हो?

लक्ष्मी खिलखिला कर हँस पड़ी। उसने कहा—मैं न तो नाराज़ हूँ और न कभी नाराज़ हो सकती हूँ। मुझे कलकत्ते की सारी बातें मालूम हैं। किसी ने मुझसे कुछ नहीं कहा। अब आप देर न कीजिये। जाइये, और बातें मैं आपको पीछे सुना दूँगी।

सुन्दरमल बाहर आया। राजा ने हँस कर पूछा—क्यों, तुम्हारी लक्ष्मी मिल गई न?

सुन्दरमल ने कहा—हाँ महाराज, अब आप जो आज्ञा दें मैं उसका पालन करूँ।

राजा की आज्ञा से मुनीम शोभाराम, माँगिया रसोइया, विलासराय, और सुन्दरमल के यहाँ विलासराय के नियुक्त किये हुए सब नये मुनीम आदि नौकर उनके सामने उपस्थित किये गये। शोभाराम ने पिछला हिसाब पेश करके राजा को यह समझाया कि इतना रुपया यहाँ और कलकत्ते की दूकान में होना चाहिए। नये मुनीमों से हिसाब माँगा गया तो उन्होंने सारा दोष विलासराय के मत्थे मढ़ दिया। सबने कहा—हम लोग तो विलासराय की सम्मति से काम करते थे। विलासराय ही के पास सुन्दरमल का सारा धन है। माँगिया रसोइया ने भी सुन्दरमल के घर का सब चरित्र आदि से अन्त तक वर्णन किया। माँगिया की बातों से लक्ष्मी निर्दोष सिद्ध हुई। इस बात के सुनते ही सुन्दरमल बहुत ही पुलकित हुआ था। माँगिया ने यह भी कहा था कि विलासराय ने ही सेठानीजी को विष दिलाया है। एक दिन लक्ष्मी, सेठानीजी के पीने की दवा चूल्हे पर छोड़ कर, पानी लाने चली गई थी तब नौकरनी ने दवा में विष मिला दिया था। उस दवा के पीने पर फिर सेठानीजी नहीं उठीं। यह बात सुनते ही राजा साहब का मुख क्रोध से लाल हो गया। उन्होंने विलासराय से पूछा—

"बोलो, तुम क्या कहते हो?" राजा का क्रोध देख कर विलासराय थर-थर काँपते हुए उनके चरणों पर गिर पड़े। परन्तु राजा ने उठ कर कुर्सी दूर खिसका ली और कहा—तुम्हारे ऐसे नराधम के छूने से भी पाप लगता है।

लक्ष्मी कोठरी में बैठी हुई सब बातें सुन रही थी। जब उसे मोहिनी को विष दिये जाने की बात मालूम हुई तब वह मूर्च्छित-सी हो गई। उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगी।

राजा ने उस नौकरनी को बुलाने की आज्ञा दी जिसने दवा में विष मिलाया था।

एक नौकर दौड़ा हुआ नौकरनी के घर गया। थोड़ी देर बाद वापस आकर उसने ख़बर दी कि नौकरनी का लड़का बाहर हाज़िर है। वह कहता है कि विलासराय ने विष दिला कर मेरी मा को मरवा डाला।

विलासराय की दुष्टता देख कर राजा का शरीर क्रोध के मारे थर-थर काँपने लगा। उन्होंने कहा—तू बड़ा पापी है। सच बता, तूने ये अपराध किये हैं या नहीं?

विलासराय की आत्मा में न जाने कहाँ से बल आ गया। उन्होंने अपने आँसू पोंछ डाले और कहा—मुझ पर जो-जो अपराध लगाये गये हैं वे सब सच हैं। मैं बड़ा पापी हूँ। मुझे महाराज फाँसी दिला दें। मैं ख़ुशी से मरने को तैयार हूँ।

विलासराय की बातें सुन कर सब महाजनों को दया आ गई,

परन्तु किसी ने कुछ कहा नहीं। राजा ने महाजनों से कहा—विलासराय की सारी सम्पत्ति ज़ब्त की जाती है। सारा धन सुन्दरमल को मिलेगा और विलासराय को कल सबेरे फाँसी दे दी जायगी। क्योंकि इस हत्यारे ने दो-दो खून किये हैं। माँगिया रसोइया का अपराध क्षमा किया जाता है क्योंकि विलासराय के लालच दिलाने पर भी वह सेठानी को विष देने के लिए सहमत नहीं हुआ। नौकरनी को तो यथोचित दण्ड मिल ही गया है।

फिर राजा ने सुन्दरमल से पूछा—अच्छा, अब तुम बताओ कि किस तरह चलोगे? फिर बुरी सङ्गति में पड़ कर अपने पिता का नाम बिगाड़ोगे या भले आदमियों की तरह चलोगे?

सुन्दरमल राजा के पैरों पर गिर कर कहने लगा—आप मेरे पिता-तुल्य हैं, मैं आपका पुत्र हूँ। आप ही की कृपा से मुझे सुख, धन और लक्ष्मी फिर मिली है। मैं अब बुरी सङ्गति में कभी नहीं पड़ूँगा।

राजा ने कहा—अच्छा, तो तुम अपना काम-काज कैसे चलाओगे?

सुन्दरमल ने कहा—अब दो-चार दिन बाद मैं कलकत्ते जाऊँगा। वहाँ (महाजनों की ओर उँगली का इशारा करके) आप लोगों की जैसी राय होगी वैसा करूँगा।

राजा ने हँस कर पूछा—कलकत्ते में कहाँ ठहरोगे? अपनी नई ससुराल में?

सुन्दरमल लज्जित हो गया।

राजा ने कहा—अब तो तुमको बहुत धन मिल गया। अब नई स्त्री को लाकर यहीं रहो। भला यह तो कहो कि जब दोनों स्त्रियों में झगड़ा होगा तब तुम किसका पक्ष लोगे ?

सब लोग हँसने लगे। सुन्दरमल लजा कर चुप हो रहा।

राजा ने फिर कहा—सुनते हैं, तुम्हारा कोई मास्टर भी कलकत्ते से साथ आया है जो तुम्हें पढ़ाया करता था।

सुन्दरमल ने कहा—हाँ महाराज, हमारे मास्टर साहब बहुत अच्छे हैं। मैं उनको अभी आपसे मिलाता हूँ। (रामधन से) रामधन ! मास्टर साहब को बुला लाओ।

सब लोग हँसने लगे।

लोगों के बार-बार हँसने से सुन्दरमल कुछ खीझ सा गया। उसने कहा—आप लोगों के बार-बार हँसने का क्या कारण है ?

राजा ने कहा—अच्छा रामधन, तुम सुन्दरमल को सबके हँसने का कारण बताओ।

राजा की आज्ञा पाकर रामधन ने लक्ष्मी और सुन्दरमल के कलकत्ते जाने के दिन से आज तक का सब हाल वर्णन किया। सुन्दरमल को सब स्वप्न-सा बोध होने लगा। उसका हृदय आनन्द से भर गया। रामधन का कथन समाप्त होते ही वह सेठ नारायणदास के पैरों पर गिर पड़ा और फिर उठ कर देवशङ्कर के गले से लिपट गया। सुन्दरमल इतना मुग्ध हो गया था कि वह मुँह से कुछ कह न सकता था।

इसके पश्चात् राजा ने लक्ष्मी को पुकारा। वह घूँघट काढ़ कर सामने आई।

राजा ने कहा—बेटी, तुम्हारी जैसी पतिव्रता स्त्रियां से मेरे राज्य की शोभा है। तुम्हारे चरित्र से मैं बहुत प्रसन्न हुआ हूँ। माँगो, तुम क्या चाहती हो ?

लक्ष्मी ने कहा—आप मेरे पिता-तुल्य हैं। आपसे माँगने में मुझे कुछ भी सङ्कोच नहीं है। मैं सिर्फ़ यही माँगती हूँ कि आप विलासराय का अपराध क्षमा कर दें। हमारे खाने-पीने भर को भगवान् ने अभी बहुत कुछ दे रक्खा है।

राजा और सब महाजन लोग "धन्य धन्य" कहने लगे।

राजा ने कहा—मैं अपने प्रतिज्ञानुसार तुम्हारी प्रार्थना स्वीकार करता हूँ।

लक्ष्मी की उदारता देख कर विलासराय हृदय के उ ेग को न सँभाल सका। वह रोकर कहने लगा—लक्ष्मी, तुम साक्षात् लक्ष्मी हो। तुम्हारा धन लेकर मैं सुखी नहीं रह सकता। तुमको अपना सब धन लेना पड़ेगा—यह कह कर विलासराय ने अपने घर से लाकर कई लाख रुपये के गहने, गिन्नियाँ और सोने के बड़े-बड़े टुकड़े राजा के सामने रख दिये और कहा—यह सब धन सुन्दरमल का है। आप उसे दे दीजिये।

राजा ने कहा—सुन्दरमल, इस धन के मालिक तुम हो।

सुन्दरमल ने हाथ जोड़ कर कहा—जो आज्ञा।

उसी समय सेठ नारायणदास ने लक्ष्मी को उसके गहने

वापस किये और लक्ष्मी के कहने से सुन्दरमल ने सेठ नारायणदास के सामने उतने रुपये गिन कर रख दिये जितने कि उसकी मा के काम में उन्होंने ख़र्च किये थे।

सुन्दरमल ने राजा और महाजनों के प्रति कृतज्ञता प्रकाश की और देवशङ्कर को बार-बार हृदय से लगा कर क्षमा माँगी।

राजा और सब महाजन लोग चले गये।

सुन्दरमल ने शोभाराम को फिर अपना मुनीम बनाया। उसने सेठ नारायणदास से रामधन को माँग लिया और उसे अपने पास बड़े सुख से रक्खा।

सुन्दरमल लक्ष्मी के साथ बड़े आनन्द से रहने लगा। जब कभी वे दोनों पास बैठते तो बीती हुई बातों की चर्चा किया करते थे। दोनों में बहुत प्रेम था। और दोनों ने गृहस्थी का सुधार करके उसे आदर्श बना दिया।

विलासराय को संसार से विरक्ति हो गई। वे साधु होकर न जाने कहाँ चले गये। नाँगिया रसोइया कुछ दिनों के बाद कोढ़ी होकर मर गया।

सुन्दरमल और देवशङ्कर में बड़ी मित्रता हुई। जब तक वे जिये, उनमें भाई-भाई सा प्रेम रहा। लक्ष्मी, सुन्दरमल और देवशङ्कर जब एक जगह होते तब उनमें बीती बातों पर कुछ दिल्लगी और छेड़-छाड़ ज़रूर ही होती।

समाप्त।

———